Con. 3.5.4.47
750

अंक 5
संख्या 4

बृहस्पतिवार
21 अगस्त,
सन् 1947 ई.

भारतीय विधान-परिषद्

के

वाद-विवाद

की

सरकारी रिपोर्ट

(हिन्दी संस्करण)

विषय-सूची

पृष्ठ

1. परिचय-पत्रों की पेशी तथा रजिस्टर पर हस्ताक्षर 1
2. संघ-अधिकार-समिति की रिपोर्ट-(जारी) 1

भारतीय विधान-परिषद्

बृहस्पतिवार, 21 अगस्त, सन् 1947 ई॰

भारतीय विधान-परिषद् की बैठक विधान-भवन, नई दिल्ली में दिन के दस बजे माननीय डा॰ राजेन्द्र प्रसाद की अध्यक्षता में आरम्भ हुई।

परिचय-पत्रों की पेशी तथा रजिस्टर पर हस्ताक्षर

निम्न सदस्यों ने अपने परिचय-पत्र पेश किये तथा रजिस्टर में अपने हस्ताक्षर किये:

बिलासपुर के राजा।

निम्न सदस्यों ने शपथ ग्रहण की:

(1) बिलासपुर के राजा।

(2) श्री सुरेन्द्र मोहन घोष (पश्चिमी बंगाल: जनरल)।

संघ-अधिकार-समिति की रिपोर्ट–(जारी)

***अध्यक्ष:** कल जिस प्रस्ताव पर वाद-विवाद हो रहा था आज हम उसी पर वाद-विवाद करेंगे।

***श्री एच॰वी॰ कामत** (मध्यप्रांत और बरार: जनरल): केवल कार्य की परिपाटी की ओर आपका ध्यान आकर्षिक करने की मुझे आज्ञा दीजिये। औपनिवेशिक व्यवस्थापिका (Dominion Legislature) के सदस्य होते हुये क्या हम भारतीय गजट तथा अन्य सरकारी प्रकाशनों को यथोचित रीति से प्राप्त करने की आशा न करें जो कि इससे पूर्व केन्द्रीय व्यवस्थापिका के सदस्यों को भेजे जाते थे।

अध्यक्ष: मैं इस संबंध में पूछताछ करूंगा।

---

*इस चिह्न का अर्थ है कि यह अंग्रेजी वक्तृता का हिन्दी रूपान्तर है।

***श्री मोहम्मद शरीफ** (मैसूर): अध्यक्ष महोदय, संघ-अधिकार-समिति की रिपोर्ट का वह भाग जो कि आज के वाद-विवाद का विषय है, बड़ा महत्वपूर्ण है क्योंकि वह प्रांत तथा रियासत के निवासियों के सामान्य तथा असामान्य अधिकारों पर विशेष प्रभाव डालता है। मुझे इसलिये भी यह महत्वपूर्ण प्रतीत होता है कि केन्द्र तथा प्रांतों और रियासतों के मध्य शासनाधिकारों के उचित और ठीक विभाजन पर ही देश की भावी उत्तम शासन-व्यवस्था निर्भर है। इसलिये यह आवश्यक है कि शासनाधिकारों का इस प्रकार बंटवारा किया जाये कि केन्द्र में प्रभावशाली नियंत्रण भी रहे तथा रियासत और प्रान्त के निवासियों को उनके अधिकारों से भी वंचित न रखा जाये। श्रीमान् जी, आप जानते हैं कि संघ में राजनिष्ठा और स्वार्थों में प्रामाणिक पार्थक्य रहता है। इन दोनों में मेल रखने के लिये एक शक्तिशाली केन्द्र की बड़ी आवश्यकता है। परन्तु आप यह भी जानते हैं कि आवश्यकता से अधिक शक्तिशाली केन्द्र फलत: निर्दयी हो जाता है और एक प्रकार से संघ के प्रादेशिक भागों के निवासियों की स्वतंत्रता और उनके विशेषाधिकारों का अपहरण करने लग जाता है। अत: शासनाधिकारों के बंटवारे के विषय में हमें बड़ा सावधान और सतर्क रहना चाहिये। हमें इस बात में सावधान रहना चाहिये कि बंटवारा इस प्रकार से हो कि एक ओर शक्ति और दूसरी ओर प्रान्तों तथा रियासतों के सामान्य और असामान्य अधिकारों में सुखद सामंजस्य रहे। इस रिपोर्ट के साथ संलग्न सूचियों को मैंने सावधानी से पढ़ा है तथा श्री गोपालस्वामी के स्पष्ट भाषण को बड़े ध्यानपूर्वक सुना। उन्होंने इस प्रश्न के विभिन्न पहलुओं पर पूर्ण रूप से वाद-विवाद किया है। उन्होंने हमारे सम्मुख प्रश्न के समस्त पहलुओं को रख दिया है। श्रीमान् जी, उन्होंने कहा ''अब चूंकि देश का विभाजन निश्चय है, हम इस विचार से सहमत हैं कि शक्तिहीन केन्द्रीय अधिकार देशहित के लिये घातक होगा। वह शांति का आश्वासन देने में, सार्वजनिक हितों संबंधी प्रमुख विषयों के एकीकरण में और अन्तर्राष्ट्रीय जगत में समस्त देश की ओर से प्रभावोत्पादन करने में असमर्थ रहेगा। साथ ही साथ हमने यह बात भली प्रकार समझ ली है कि ऐसे अनेक विषय हैं जिनके अधिकार पूर्णतया प्रदेशों के अधीन रहने चाहियें और यह भी समझ लिया है कि एक सत्तात्मक राज्य के आधार पर विधान निर्माण करना दोनों राजनीति और शासन में पीछे कदम रखना होगा। तदनुसार हम इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि हमारे विधान का सुदृढ़ रूप एक संघ में है जिसका केन्द्र शक्तिशाली हो।'' श्रीमान् जी, श्री गोपालस्वामी आयंगर का उचित सम्मान करते हुये मैं नहीं समझता कि यह रिपोर्ट बहुत संतोषजनक है क्योंकि वह प्रान्तों और रियासतों को एक गौण रूप प्रदान करना चाहती है। 150 वर्ष के विप्लव के पश्चात्, भारतीय जनता के

150 वर्ष तक बलिदान और त्याग करने के पश्चात्–जिसका स्पष्ट रूप से अभी कुछ दिन पूर्व पं॰ जवाहरलाल नेहरू ने वर्णन किया था हम ब्रिटिश साम्राज्यशाही का उन्मूलन कर सके हैं। उस साम्राज्यवाद को किसी अन्य रूप में न जमने दीजिये। केन्द्र अपने प्रादेशिक भागों से क्यों डाह रखे? आखिर रियासतों और प्रान्तों में रहने वाले लोग सारी भारतीय जनता का एक भाग हैं। उनकी क्रियायें केन्द्र की क्रियाओं के अनुरूप ही हैं इसलिये यह संदेह होना ही नहीं चाहिये। मैं इसलिये निवेदन करता हूं कि केन्द्र ही सारे अधिकारों को हड़प न करे। मैसूर रियासत का तो मैं हूं ही। मैं अनुभव करता हूं कि यह रिपोर्ट अत्यन्त असंतोषजनक है। श्रीमान्जी, आप जानते हैं कि हम भारतीय संघ में तीन प्रमुख विषयों को लेकर सम्मिलित हुये हैं; वैदेशिक विभाग, यातायात और रक्षा। इन विषयों पर हमने संधि की है और संघ में शामिल हुये हैं। जहां तक संघ-व्यवस्थापिका की विषय-सूची से संबंध है आपने हमसे अधिकार छीनने का प्रयत्न किया है; उदाहरणार्थ, आप हमारे व्यापार में बाधायें डालना चाहते हैं। विदेशों से व्यापार और व्यवसाय आप अपने हाथ में रखना चाहते हैं। रक्षा-हित भूमि पर कब्जा करने के अधिकार आप चाहते हैं। इन सब बातों से अधिकार प्राप्त करने के प्रयत्न की गंध आती है। श्रीमान्जी, जहां तक इस रिपोर्ट से संबंध है आपने कल कहा था कि हम केवल प्रमुख विषयों को ही लेंगे।

***एक माननीय सदस्य:** इस संबंध में नहीं।

***श्री मोहम्मद शरीफ:** मुझे खेद है। किसी तरह हो, मैं सभा से निवेदन करूंगा कि वह इस बात का ध्यान रखे कि केन्द्र समस्त अधिकारों को हड़प न ले; बल्कि केन्द्र और प्रदेशों में अधिकारों के बंटवारे में समान रूप से सौख्यपूर्ण सामंजस्य रहे।

***श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर** (मद्रास: जनरल): अध्यक्ष महोदय, मेरे माननीय मित्र श्री गोपालस्वामी आयंगर ने इस रिपोर्ट पर पूर्ण रूप से प्रकाश डाला है। अत: इस विषय पर, अर्थात् संघ-अधिकार-समिति की रिपोर्ट पर विचार, जो आज सभा के समक्ष है, मैंने वाद-विवाद में भाग लेना नहीं चाहा था। लेकिन मेरे माननीय मित्र श्री सन्तानम् की कुछ बातों ने मुझे विवश किया (जिनकी राय और बातों का मैं सदैव उच्च आदर करता हूं) जो इस संबंध की थीं कि कमेटी

[श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर]

ने अपने कर्तव्य का पालन गंभीरतापूर्वक नहीं किया। मेरे माननीय मित्र के रिमार्क दो शीर्षकों के अंतर्गत आते हैं:

(1) संघ की आर्थिक व्यवस्था के विषय का संबंध और संघ तथा प्रदेशों में कर लगाने वाले अधिकारों का बंटवारा।

(2) संघ की विषय-सूची या सहगामी विषय-सूची में कुछ विषयों को बढ़ाकर प्रान्तीय व्यवस्थापिका की सत्ताओं पर सामान्य अधिकार जमाना। मैं इन दोनों विषयों पर क्रम से विचार प्रकट करूंगा।

यह अस्वीकार नहीं किया जा सकता कि संघ की आर्थिक व्यवस्था का विषय और संघ तथा प्रदेशों में कर लगाने वाले अधिकारों के बंटवारे का विषय किसी भी संघ-नियोजित शासन-व्यवस्था में एक कठिन और पेचीदा समस्या है, जिसे सावधानी और विवेक से सुलझाना चाहिये और इस विषय पर विचार करते हुये हमें हर समय यह याद रखना चाहिये कि यह सब होते हुये भी वह व्यक्ति या समाज ही है जिस पर कर लगाना है चाहे कर लगाने वाली दो एजेंसियां हों और कर लगाने के लिये कोई असीमित क्षेत्र न हो। दूसरी बात यह है कि देश का औद्योगिक, व्यावसायिक और कृषि प्रबन्ध परस्पर इतनी घनिष्ठता से संबंधित है कि एक पर कर लगाने से दूसरे पर कर लगाने की प्रतिक्रिया आवश्यक हो जायेगी। इन बातों को ध्यान में रखते हुये हम अन्य संघों की कर-प्रणाली पर विचार करें और इस देश की विशिष्ट परिस्थितियों, गरीबों और इस देश के मध्यम वर्गीय नागरिकों की कर देने की क्षमता पर उचित ध्यान रखते हुये देखें कि अन्य देशों की प्रणाली से भारत में प्रचलित प्रणाली में कुछ सुधार है अथवा नहीं। आस्ट्रेलिया में कामनवेल्थ को कर लगाने के पूर्ण अधिकार हैं केवल इस बात के कि वह प्रदेशों या प्रदेशों के भागों में कोई अन्तर नहीं रख सकती। आस्ट्रेलिया का मैं विशेषकर जिक्र कर रहा हूं क्योंकि वह ऐसा संघ है जिसमें कि अवशिष्ट अधिकार यूनियन को हैं। प्रदेश को कानून बनाने के पूर्ण अधिकार हैं और केवल विशेष विषयों के अधिकार केन्द्र को दिये गये हैं। उस देश में भी आधुनिक प्रदेशों की आवश्यकताओं के कारण यह आभास किया गया कि कर लगाने का सम्पूर्ण अधिकार केन्द्र को होना चाहिये। आस्ट्रेलिया के केन्द्र के कर लगाने के अधिकार में कोई सीमा नहीं है सिवा इसके कि वह प्रदेशों में अंतर न करेगा। कर और चुंगी के संबंध में केन्द्र को एक मात्र अधिकार है यद्यपि अन्य कर-संबंधित विषयों में

केन्द्र को प्रदेशों के अधिकारों के साथ समान रूप से मिले-जुले और व्यापक अधिकार हैं। कनाडा उपनिवेश के विधान में कर लगाने के संबंध में प्रान्त के अधिकार मालगुजारी बढ़ाने के निमित्त प्रत्यक्ष कर लगाने, दुकानों पर तथा अन्य लाइसेंसों पर कर लगाने तक सीमित हैं और यह प्रत्यक्ष कर लगाने के अधिकार के प्रयोग के कारण है कि कनाडा के प्रान्त कारपोरेशन-टैक्स, आय-कर (इन्कम टैक्स) और उत्तराधिकार-कर (सक्शेशन ड्यूटी) लगा रहे हैं जहां कि उत्तराधिकार प्रान्त की सीमा के अन्दर हो। जहां तक केन्द्र का संबंध है उसको सम्पूर्ण तथा असीमित अधिकार हैं। संघ और प्रान्तीय संबंधों की जांच करने के लिये जो रॉयल कमीशन अभी नियुक्त किया गया था वह निश्चयात्मक रूप से इस पक्ष में था कि प्रान्तों से कारपोरेशन-टैक्स का अधिकार हटा लिया जाये। उनके अधिकार में लाभदायक लाइसेंस-टैक्स, वास्तविक जायदाद पर कर या कन्सम्यूशन टैक्स, जो कारपोरेशन तथा अन्य भोक्ताओं पर लागू करने योग्य हों, रखे जायें। डिफरेंशियल टैक्सों ने, जो कि कनाडा के विभिन्न प्रान्तों ने निर्धारित किये हैं, साहस और तत्परता को कुचल डाला तथा दुहरे और तिहरे करों के कारण और अधिकार क्षेत्र के बंटे हुये होने के कारण निपुणता और एकरूपता में कमी कर दी। प्रान्तों द्वारा उत्तराधिकार-कर के विषय ने अधिकार-क्षेत्र में वैमनस्य उत्पन्न कर दिया तथा इसके कारण प्रिवी कौंसिल में विरोध के मुकद्दमे गये। संबंधित उद्योगों द्वारा प्रान्तों और केन्द्र के दुहरे कर लगाने पर विरोध हुआ। कर-निर्धारण-पद्धति में पूर्णरूपेण परिवर्तन करने की सिफारिश कमेटी ने की जिससे कि एकरूपता हो सके। खास सिफारिश यह थी कि कर निर्धारित करने का अधिकार केन्द्र को हो और कर-निर्धारण करने के विषय पर प्रान्तों में एकीकरण किया जाये। इस विषय पर मैं यह कह दूं कि मैं प्रान्तों और केन्द्र में एक निश्चित अनुपात के नियत करने के पक्ष में हूं यद्यपि कर एकत्रित करने का माध्यम एकरूपता के कारण केन्द्र रहे। मुझे इसमें संदेह नहीं है कि यदि कोई फाइनेन्शियल कमीशन या कमेटी इस विषय पर विचार करे तो वह किसी संतोषजनक नतीजे पर पहुंच सकती है, जिससे कि प्रान्तों को विभिन्न सामाजिक कार्यों पर व्यय करने के लिये आवश्यक भाग (कोटा) मिल सके। अमेरिका में भी धारा 'एस' के अंतर्गत कर-निर्धारण करने का अधिकार कांग्रेस को है, केवल यह प्रतिबंध है कि जो कर लगाये जाते हैं आबकारी पर और देशी माल पर लगाये जाने वाले करों को शामिल करते हुये, समस्त यूनाइटेड स्टेट्स एक रूप होंगे और किसी प्रदेश से बाहर भेजे जाने वाले माल पर कर नहीं लगेगा।

[श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर]

भारतीय-विधान-धारा की आर्थिक बंटवारे की योजना के अंतर्गत और किसी सीमा तक जैसे कि इस रिपोर्ट में विचार किया गया है जहां तक हो सका है इस बात का ध्यान रखा गया है कि नागरिक पर दो जगह से कर न लगने पाये। इसी कारण कुछ विशिष्ट कर केन्द्र के अधिकार में दे दिये गये हैं और अन्य कर प्रान्तों के अधिकार में। उन करों को जिन्हें उगाहने का अधिकार सुविधा के कारण केन्द्र को है, प्रान्तों में बांटने के लिये ऐसी व्यवस्था कर दी गई है जो केवल वसूल करने के खर्चे के अधीन है या समस्त आय को केन्द्र और प्रान्तों में बांटने के अधीन है। कुछ कर जैसे कि कारपोरेशन-कर, चुंगी और एक्साइज की कुछ खास मदों पर कर, इनको वसूल करने और उसकी आय पर अधिकार करने के लिये केन्द्र को उत्तरदायित्व दे दिया है। जायदाद-कर, उत्तराधिकार-कर और इनके समान अन्य करों को एकरूपता लाने, शीघ्रता के साथ वसूल करने और शासन-व्यवस्था में सुचारूता लाने के कारण एकत्रित करने का अधिकार केन्द्र को है, लेकिन आय प्रांतों में बांट दी जायेगी। आय-कर के संबंध में योजना है कि वह प्रांतों और केंद्रों में बांटी जाये। कर-निर्धारण के कुछ मदों को उगाहने तथा उसकी आय पर एकमात्र अधिकार रखने का हक प्रान्तों को दे दिया गया है। यद्यपि कर के कुछ मदों में परिवर्तन करने या उनका फिर से बंटवारा करने पर मैं आपत्ति नहीं करता, यदि वह इसी कार्य के लिये नियोजित कमेटी की सिफारिशों के आधार पर हो। फिर भी मैं यह कहने का साहस करता हूं कि भारतीय सरकार में कर बांटने की योजना और किसी सीमा तक प्रथम कमेटी की रिपोर्ट ठीक है और कुछ बातों में तो दूसरे देशों की कर-निर्धारण की योजना से अच्छी है।

केवल साधारण विचारों के अतिरिक्त मेरे माननीय मित्र ने यह नहीं बताया कि किन कारणों से कर-निर्धारण और बंटवारे की योजना ठीक नहीं है और किन कारणों से कमेटी की सिफारिशें दोषपूर्ण हैं। इतना तो हुआ आर्थिक व्यवस्था के संबंध में।

अधिकारों के बंटवारे की योजना के संबंध में सभा यह अनुभव करेगी कि सामान्यतः इसका अपवाद करने की कोई गुंजाइश नहीं है। केन्द्र की सूची के बहुत से विषय रक्षा, वैदेशिक विभाग और यातायात के तीन मुख्य शीर्षकों के अंतर्गत रखे जा सकते हैं जैसा कि मंत्रिमंडल-योजना में दिया गया है। दूसरे विषय जैसे कि विनिमय-पत्र (Bills of Exchange), बैंकिंग, कारपोरेशन लॉ, परस्पर व्यापार (Inter unit-trade), देश के समान्य कल्याण से संबंध रखते हैं। आस्ट्रेलिया और

कनाडा के अनुसार यह संभव है कि बैंकिंग, कारपोरेशन लॉ और बीमा से संबंधित उन कारपोरेशन में जिनका केवल प्रान्तीय उद्देश्य हो और उन कारपोरेशन में जिनका उद्देश्य प्रदेश की सीमा से बाहर भी हो कुछ विभेद रखा जाये। यदि ऐसा है तो किसी कमेटी या इस सभा को यह अधिकार होगा कि वह इस पर विचार करे और बहस करे कि उन कारपोरेशन और बैंकों के लिये जिनका केवल प्रान्तीय उद्देश्य है कोई अपवाद तो नहीं करता है। हम एक शक्तिशाली केन्द्र के लिये चीख रहे हैं। यदि आप प्रान्तीय विषय-सूची पर ध्यान दें तो बहुत कम प्रान्तीय विषयों को लिया गया है और उनको संघ विषय-सूची में सम्मिलित किया गया है। यह बहुत लाभदायक होगा यदि प्रान्तीय विषय-सूची के एक-एक विषय को लिया जाये और केन्द्रीय विषय-सूची के विषयों को भी क्रम से लें और फिर यह देखें कि उनमें से कौन-कौन से विषय प्रान्तीय सूची में रखे जा सकते हैं बनिबस्त इसके कि केन्द्र और प्रान्त, शक्तिशाली केन्द्र और निर्बल प्रान्त, शक्तिशाली प्रान्त और निर्बल केन्द्र के विषयों पर संक्षेप में वाद-विवाद करें। जबकि हम भविष्य के लिये विधान बनाने के लिये व्यावहारिक प्रश्न पर विचार कर रहे हैं तो उपरोक्त वाद-विवाद से हमें कोई सहायता नहीं मिलेगी। थोड़े दिनों के पश्चात् ही हमें विशेष विषयों पर ध्यान केन्द्रित करना होगा और यह देखना होगा कि कौन-कौन से विषय परिवर्तन करने योग्य हैं। शक्तिशाली केन्द्र या निर्बल केन्द्र नाम की वस्तु पर आक्षेप करने की अपेक्षा यह अधिक लाभदायक सिद्ध होगा। केन्द्र में बहुत कम विषय रखे जायें फिर भी वह केन्द्र शक्तिशाली हो सकता है। आज यह नहीं कहा जा सकता कि आस्ट्रेलिया का या अमेरिका का केन्द्र शक्तिशाली नहीं है। अतः भारत की स्थिति पर विचार करते हुये और विषय से संबंधित मुख्य राष्ट्रीय हितों को ध्यान में रखते हुये हमें यह देखना है कि कौन-सा विषय केन्द्रीय सूची में रखा जा सकता है, कौन सहगामी विषय-सूची के लिये है और कौन प्रान्तीय विषय-सूची में रखने योग्य है। केन्द्र और प्रान्तों इत्यादि पर सामान्य आक्षेप करने की अपेक्षा विषय के निकट पहुंचने के लिये यह अधिक लाभदायक ढंग होगा। जैसा कि मैं पहले कह चुका हूं प्रान्तीय सूची के बहुत कम विषयों को केन्द्र को दिया गया है।

सहगामी विषय-सूची में साधारण भारतीय कानूनी जाब्ते या हिन्दू कानून जैसे विषयों का शामिल करना कानून को एकरूपता प्रदान करता है। यह भी हमारे विधान की एक अत्यन्त लाभप्रद रूपरेखा है। उदाहरणार्थ, जायदाद हस्तांतरित करने का एक्ट (Transfer of Property Act), हिन्दू कानून, उत्तराधिकार कानून इत्यादि। बहुत

[श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर]

से सहगामी सूची के विषयों को स्वीकार करने में रियासतों को भी कोई आपत्ति नहीं है। मैं कोई कारण नहीं पाता कि रियासतें क्यों केवल सर्वोच्च सत्ता की लोलुपता के कारण नकल करती रहें या थोड़ा-बहुत परिवर्तन करके समस्त भारत से संबंधित मुख्य और सार्वजनिक हित संबंधी विषयों पर अपने एक्ट बनाती रहें। यह आजकल आम रिवाज है और बहुत-सी रियासतों में प्रचलित है कि जैसे ही भारतीय व्यवस्थापिका में कोई एक्ट स्वीकृत होता है उस एक्ट की नकल थोड़े परिवर्तन के साथ रियासतों में होती है जिससे वकीलों की जेब गरम होती है और भारत के विभिन्न प्रदेशों में कानून की एकरूपता नहीं रह पाती।

संकट कालीन व्यवस्थाओं (Break down Provision) को लेते हुये मैं यह कहूंगा कि वे प्रान्त के उन प्रतिनिधियों के कहने और यदि कह सकूं तो हठ के कारण शामिल की गई हैं जो भारत के विभिन्न प्रान्तों में मंत्री का पद ग्रहण किये हुये हैं। इसलिये श्रीमान् जी, मैं यह कहने का साहस करता हूं कि संघ-अधिकार-समिति की रिपोर्ट इस सभा के लिये विचारणीय है, और मुझे इसमें संदेह नहीं है कि परिश्रम और सूक्ष्म अन्वेषण के पश्चात्, जो निःसंदेह इस सभा के विचारशील क्षेत्रों द्वारा किया जायेगा, आपको इस रिपोर्ट में ऐसी कोई भी बात नहीं मिलेगी जिसका अपवाद किया जाये। इसलिये मैं प्रस्ताव का समर्थन करता हूं कि इस रिपोर्ट पर सभा विचार करे।

***श्री बालकृष्ण शर्मा** (संयुक्त प्रान्तः जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं इस प्रस्ताव का समर्थन करता हूं कि संघ-अधिकार-समिति की दूसरी रिपोर्ट पर विचार किया जाये।

जब हम इस रिपोर्ट पर प्रारम्भिक वाद-विवाद कर रहे हैं हमको सामान्यतः उन आधारभूत विचारों को प्रकट करने के लिये कहा गया है कि जिन पर संघ-अधिकार-समिति की रिपोर्ट अवलम्बित है। रिपोर्ट के दूसरे पैरे में यह कहा गया है:

''मंत्रिमंडल की योजना में केन्द्रीय सत्ता के क्षेत्र में कठोर परिमितितायें थीं जिन पर हम समझ सकते हैं कि परिषद् को देश की शासन-व्यवस्था संबंधी आवश्यकताओं पर अपने निर्णय के विरुद्ध मुस्लिम लीग को संतुष्ट करने के लिये समझौता स्वीकार करना पड़ा। अब विभाजन अवश्यम्भावी है, हम सबकी एक राय है कि

केन्द्र के निर्बल अधिकार देश-हित के लिये घातक होंगे जो कि शांति का आश्वासन देने में, सार्वजनिक हितों संबंधी प्रमुख विषयों के एकीकरण में और अंतर्राष्ट्रीय जगत में समस्त देश की ओर से प्रभावोत्पादन करने में असमर्थ रहेंगे।''

श्रीमान् जी, मैं समझता हूं कि यह वह सिद्धान्त है जिसका कोई विवेकशील व्यक्ति अपवाद नहीं कर सकता है। जब हमने 16 मई की योजना को स्वीकार कर लिया और जब उसके फलस्वरूप इस नतीजे पर पहुंचे कि जो अधिकार केन्द्र को सौंपे जा रहे हैं वे बहुत परिमित हैं तो हममें से अनेकों ने यह आभास किया कि यह बात ठीक नहीं, केन्द्र को अधिक अधिकार होने चाहियें जिससे कि वह अपनी उन जिम्मेवारियों को निभा सके जो स्वतंत्रता प्राप्त करने पर आयेंगी। परन्तु जैसा कि ठीक बताया गया है, 16 मई की योजना में निर्धारित सिद्धान्तों को स्वीकार करने के अतिरिक्त हम कुछ नहीं कर सकते थे। अब वह योजना रद्द कर दी गई है और आज हमें यह बात स्पष्ट समझ लेनी है कि शक्तिशाली केन्द्र से हमारा क्या आशय है और जिन अधिकारों को हम केन्द्र को सौंप रहे हैं वे प्रान्तों की स्वतंत्र उन्नति में बाधक तो नहीं हैं।

सूचियों में दिये हुये विभिन्न विषयों को लेने से पूर्व यह आवश्यक है कि हम यह ध्यान रखें कि शक्तिशाली केन्द्र की क्या-क्या विशेषतायें हैं। शक्तिशाली केन्द्र की विशेषतायें मेरे विचार से तो ये हैं कि उसकी स्थिति ऐसी हो कि वह समस्त देश की भलाई के लिये विचार कर सके और योजना बना सके, जिसका यह अभिप्राय है कि उसे केवल संकटकाल में कार्रवाइयों में एकरूपता लाने का ही अधिकार न हो वरन् देश की आर्थिक प्रगति में विभिन्न प्रान्तों को आदेश देने के भी अधिकार हों। शक्तिशाली केन्द्र की दूसरी विशेषता यह है कि आवश्यकता पड़ने पर प्रान्तों में शासन संबंधी सुधार-हित साधन उपलब्ध कर सके। तीसरी विशेषता यह है कि संकटकालीन अवस्था में समस्त देश के हित के लिये प्रान्तों को अपनी आर्थिक और औद्योगिक परिपाटी को सुव्यवस्थित रखने के आदेश दे सके। शक्तिशाली केन्द्र की चौथी विशेषता यह है कि देश को विदेशी हमले और परस्पर घातक विद्रोह से बचाने के यथेष्ट अधिकार उसके पास हो। शक्तिशाली केन्द्र की पांचवीं विशेषता यह है कि अंतर्राष्ट्रीय जगत में समस्त देश का प्रतिनिधित्व करने के लिये वह यथेष्ट शक्ति सम्पन्न हो।

मैं एक शक्तिशाली केन्द्र की ये विशेषताएं समझता हूं।

[श्री बालकृष्ण शर्मा]

दूसरा प्रश्न यह है कि शक्तिशाली केन्द्र की ये विशेषतायें होते हुये भी हम एक शक्तिशाली केन्द्र चाहते हैं या नहीं। इस प्रश्न पर वाद-विवाद करने से पूर्व हमको यह समझ लेना चाहिये कि शक्तिशाली केन्द्र की स्थिति उसके अंतर्गत रहने वाले किसी शक्तिशाली प्रदेश की स्थिति से किसी प्रकार का कोई संघर्ष उत्पन्न नहीं करती है।

कल हमने प्रान्तीय स्वायत्त शासन के दो वीरों के अनोखे भाषण सुने। एक भाषण मौ॰ हसरत मोहानी का था और दूसरा श्री के॰ सन्तानम् का। श्री सन्तानम् ने तो संघ-अधिकार-समिति की इस योजना के अनुसार केन्द्र को दिये जाने वाले अधिकारों के विषय पर बड़ा तीक्ष्ण और उग्र भाषण दिया। परन्तु यदि हम उन विषयों का विश्लेषण करें जो कि योजना के साथ सूची में हैं तो हम यह मालूम करेंगे कि ऐसे बहुत कम विषय हैं जिनका श्री सन्तानम् जैसे विकेन्द्रीकरण योजना के प्रवर्त्तक भी अपवाद कर सकें। विश्लेषण करने पर मैं इस नतीजे पर पहुंचा हूं कि संघ की विषय-सूची में संख्या 1 से 10 तक के विषय भिन्न-भिन्न रूप से रक्षा-कार्य के अंतर्गत आते हैं, और मैं नहीं समझता कि ऐसा भी कोई व्यक्ति होगा जो इसका अपवाद करे। उदाहरणार्थ, संघ के प्रदेशों या उसके किसी भाग की रक्षा, रक्षा के लिये सब तैयारियां और इसके साथ-साथ वे समस्त कार्य-साधन जो कि युद्धकाल में विजय प्राप्त कराने में सहायक हों और युद्ध समाप्त हो जाने के पश्चात् सेना तोड़ने का कार्य। केन्द्र को इस प्रकार के कार्य सौंपने में इस सभा के किसी सदस्य को कोई आपत्ति नहीं होगी। मैंने कहा था कि संख्या 1 से 10 तक के भिन्न-भिन्न विषय केन्द्र को रक्षा के उत्तरदायित्व के अन्तर्गत आते हैं और मैं नहीं समझता कि कोई व्यक्ति इसका अपवाद करेगा।

इसके बाद संख्या 11 से 25 तक के भिन्न-भिन्न विषय विदेशी विभाग के अन्तर्गत आते हैं और इनके लिये भी मैं नहीं समझता हूं कि श्री सन्तानम् या मौ॰ हसरत मोहानी भी कोई अपवाद करेंगे।

इसके बाद हम मद 26 से 28 तक को लेते हैं। ये आयात और निर्यात, पुस्तकालय, अजायबघर और विश्वविद्यालयों के संबंध में हैं। ये वे उत्तरदायित्व हैं जो कि केन्द्र के अधिकार में हैं ही और उनको केन्द्र के ही अधिकार में रखना है और मैं यह नहीं समझता कि इस उत्तरदायित्व को केन्द्र को सौंपने के विरुद्ध कोई सारयुक्त बात कही भी जा सकती है क्या!

इसके बाद हम 29 और 30 मदों पर आते हैं जो यातायात के अंतर्गत आते हैं। इनको भी केन्द्र के आवश्यक अंग मानने में कोई कठिनाई नहीं हो सकती है।

संघ की सूची में 40 मद से 53 मद तक पैमाइश (Survey) संघ का, न्याय-विभाग तथा जायदाद का संघ-हित के लिये ग्रहण करना, अनुसंधान, जनगणना, भारतीय रिजर्व बैंक, सरकारी ऋण, सूद, मुद्रा (Currency) जैसे विभिन्न विषय हैं। श्रीमान्‌जी, मुझे संदेह है कि ये विषय भी प्रान्तों को दिये जा सकेंगे। यह ठीक और उपयुक्त है कि संघ-अधिकार-समिति ने इन सब विषयों को केन्द्र के सुपुर्द किया है।

तत्पश्चात् 54 मद से 59 मद तक हम कुछ ऐसे विषयों पर आते हैं जो व्यापार, अर्थ, बीमा, कारपोरेशन्स, बैंकिंग, चैक, विनिमय-पत्र (Bill of Exchange), सनद (Patent) और मुद्रणाधिकार (Copy Right) से संबंध रखते हैं। किसी प्रान्त पर इनके उत्तरदायित्व का भार नहीं लादा जा सकता है। इस प्रकार यदि आप सूची की सूक्ष्म परीक्षा करें तो किसी मद का अपवाद नहीं किया जा सकता है। बेशक मद 54 और 64 विवादास्पद हैं।

मद संख्या 54 कहता है:

''संघ के अंतर्गत प्रदेशों के किसी भाग में संघ पर असर डालने वाली बड़ी-बड़ी आकस्मिक संकटपूर्ण आर्थिक परिस्थितियों पर विचार करने और प्रबंध करने के अधिकार।''

मद संख्या 64 बताता है:

''उन स्थानों में उद्योग-धंधों की उन्नति जहां कि संघीय कानून द्वारा जनता के हितार्थ संघ के नियंत्रण में उन्नति करने की घोषणा की जा चुकी हो।''

ये दो विषय हैं जिनका यह कह कर अपवाद किया जा सकता है कि ये प्रांतों के उत्तरदायित्वों का अपहरण करते हैं।

लेकिन मैं यह निवेदन करूंगा कि प्रान्तों में ऐसे अवसर आ जाते हैं और परिस्थितियां उत्पन्न हो जाती हैं जबकि प्रान्त स्वयं इन गंभीर समस्याओं को नहीं सुलझा पाते और यदि हमें देश में समान औद्योगिक वितरण की प्रगति का उपभोग

[श्री बालकृष्ण शर्मा]

करना है तब तो हमें इन दोनों मदों में दिये गये अधिकारों को केन्द्र के लिये सुरक्षित रखना ही है। इसलिये मैं नहीं समझता कि इन विषयों को केन्द्र के सुपुर्द करने में कोई विरोध हो सकता है। जो कुछ भी श्री सन्तानम् और हसरत मोहानी ने कहा उसमें मैंने विकेन्द्रीकरण के भाव को पाया और जब मैं उनके भाषण को सुन रहा था, मैं अपने मन में प्रश्न कर रहा था कि कहीं यह भारत की प्राचीन ऐतिहासिक विश्लेषणात्मक प्रवृत्ति तो नहीं है जो कि स्वयं इन वीरों के रूप में भाषण दे रही है। श्री सन्तानम् ने बहुत-कुछ कहा कि विधान निर्माताओं के मस्तिष्क में केन्द्र को आवश्यकता से अधिक अधिकार देने की बात जड़ जमा चुकी थी। जहां तक मस्तिष्क में किसी बात के जड़ जमा लेने से संबंध है, मैं समझता हूं कि यह तो बिल्कुल उलटा ही है। ये तो विकेन्द्रीकरण के प्रवर्त्तक ही हैं जो इस भय से भयभीत हैं कि जब तक केन्द्र को निर्बल न बनाया जायेगा, तब तक समस्त अधिकार जिनका प्रान्तों में उपभोग करने की उन्हें आशा है, नाममात्र को रह जायेंगे। इस प्रकार के भय से हमें भयभीत नहीं होना चाहिये। हमको ''हौआ'' का विचार नहीं करते रहना चाहिये और इसके साथ-साथ दूसरों से उससे डरने के लिये न कहना चाहिये।

मेरे ख्याल से मौ॰ हसरत मोहानी ने देश में समाजवादी गणतंत्र की स्थापना करने के संबंध में बहुत-कुछ कहा। मैं समझता हूं कि मौलाना साहब यह नहीं जानते कि सोवियत समाजवादी जन इस देश में जब तक नहीं पनप सकते हैं तब तक कि उनका सुसंगठन न हो और केन्द्रीय आदेश न हों। यह सब होते हुये भी हम सबको औद्योगिक सामाजीककरण के परिणाम के लिये तत्पर रहना चाहिये। औद्योगिक समाजीकरण ऐसे विषय नहीं है कि वह एकदम लागू कर दिया जाये। उसके लिये केन्द्र से आदेश मिलना चाहिये। उसके लिये केन्द्र को पथ-प्रदर्शक बनाना चाहिये और फिर हम सबको राष्ट्रीयकरण और सामाजीककरण के क्रम में अनेकों विचित्र बातों के लिये तत्पर रहना चाहिये। हम उससे बच नहीं सकते हैं। और फिर समाजवाद स्थापन करने के लिये हमें अपने देश में विकेन्द्रीकरण के ढंग की सरकार बनानी होगी। उससे हमें बहुत अधिक लाभ नहीं होगा। इसलिये मैं निवेदन करता हूं कि रिपोर्ट, जैसी कि बनाई गई है, हमारे पूर्ण समर्थन प्राप्त होने योग्य है और जब हम इसके एक-एक मद पर वाद-विवाद करेंगे तो सभा को यह अवश्य विदित होगा कि जो कुछ भी इसके विरोध में कहा गया है वह यथार्थ नहीं है।

यह भी कहा गया था कि अधिकार और आय का समान बंटवारा होना चाहिये। यह तो है ही। प्रान्तीय विषय-सूची की ओर देखिये। आपको ऐसे 19 अर्थात् 40 से 58 तक मद मिलेंगे जो कि कर-निर्धारण के समस्त अधिकार प्रान्तों को देते हैं। मुझे उन सब मदों के वर्णन करने की आवश्यकता नहीं है। प्रान्त अपनी मालगुजारी ले सकते हैं जिसमें मालगुजारी लगाना और उगाना, भूमि संबंधी रिकार्ड का सुरक्षित रखना, मालगुजारी और अधिकारों के रिकार्ड के लिये पैमाइश, तथा कृषि-आय पर कर, भूमि और इमारतों पर कर, कृषि-भूमि के उत्तराधिकार पर कर, कृषि-भूमि पर सम्पत्ति-कर (Estate-Duty), खनिज अधिकारों पर कर, वैयक्तिक कर (Capitation Tax), धंधे, व्यवसाय पर कर इत्यादि, इत्यादि शामिल हैं। प्रान्तों को कर लगाने के इतने अवसर दिये गये हैं और श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर के अत्यंत विद्वतापूर्ण तथा स्पष्ट भाषण को सुनकर, जो कि अभी कुछ मिनट पूर्व ही हुआ है, हम समझ सकते हैं कि किसी प्रकार भी प्रान्तों के हितों की उपेक्षा इस रिपोर्ट के निर्माताओं ने नहीं की है। श्रीमान्‌जी, इसलिये मैं इस रिपोर्ट का हार्दिक समर्थन करता हूं और मैं समझता हूं कि गंभीर विचार करने पर सभा को यह विदित हो जायेगा कि ऐसी कोई भी मद नहीं है जिसका अपवाद किया जा सके।

***श्री जी॰एल॰ मेहता** (पश्चिमी भारतीय रियासतें): कल जब हममें से कुछ सदस्यों ने इस वाद-विवाद में भाग लेना चाहा था, मेरा ऐसा ख्याल था कि इस रिपोर्ट का जो कि बड़ी योग्यता तथा कुशलता के साथ श्री गोपालस्वामी आयंगर ने पेश की है, इस सभा द्वारा स्वागत किया जायेगा। यह ठीक है कि मौलाना हसरत मोहानी ने दो भाषा मिश्रित भाषण में जो संशोधन पेश किया है उसके लिये हम तैयार थे। श्री के॰ सन्तानम् की उद्देश्यमूलक प्रवृत्ति का मैं बहुत सम्मान करता हूं, परन्तु उनके भाषण ने तो मुझे आश्चर्यचकित कर दिया। अध्यक्ष महोदय, अधिकारों के बंटवारे के विषय पर हम इस प्रकार वाद-विवाद कर रहे हैं कि मानो वह रस्साकशी हो अथवा दो अधिकारियों में परस्पर संघर्ष। इस प्रकार की कोई बात नहीं है। यह एक योजना है जिसमें परस्पर रियायतों द्वारा प्रान्तीय और सांस्कृतिक राजभक्ति की रक्षा की जानी चाहिये और भारतीय संघ की राजनैतिक शक्ति और दृढ़ता में उन्नति हो। दूसरी रिपोर्ट ने यह स्पष्ट बता दिया है कि केन्द्र को अवशिष्ट अधिकार क्यों होने चाहिये। मौलाना हसरत मोहानी ने कल यह कहकर हमें अचम्भे में डाल दिया कि चूंकि अब भारत का विभाजन हो गया है केन्द्र को इन अवशिष्ट अधिकारों को सौंपने की कोई आवश्यकता नहीं है।

[श्री जी.एल. मेहता]

इसके विपरीत प्रदेशों को अवशिष्ट अधिकारों में रियायतें देने का कारण साम्प्रदायिक हितों के लिये एक प्रकार का सौदा था। लेकिन अब चूंकि विभाजन हो गया, कोई कारण नहीं है कि भारतीय संघ एक शक्तिशाली केन्द्र न बनाये। अध्यक्ष महोदय, समाजवादी गणतंत्र राज्य (रूस) का हवाला देने में कुछ आनन्द आता है, लेकिन यदि आप सोवियत रूस के विधान और प्रगति का अध्ययन करें तो आपको यह मिलेगा; पृथक् होने के अधिकार तथा अन्य अधिकार जो कि प्रदेशों को दिये गये हैं केवल नाममात्र के सिद्धान्तीय अधिकार हैं। समस्त राष्ट्र का शासन कम्युनिस्ट दल के कठोर और निरंकुश अनुशासन द्वारा किया जाता है। इसलिये भारतवर्ष में सदैव रूस का उदाहरण देने से कोई लाभ नहीं कि वह स्वतंत्र है। जैसा कि पूर्व वक्ता श्री बालकृष्ण शर्मा ने बताया कि यदि देश में समाजवाद हो भी जाये तो भी यह नितान्त आवश्यक है कि केन्द्र की ओर से आदेश हों। अध्यक्ष महोदय, हमें यह नहीं भूलना चाहिये कि जो संघ हम बनाने का प्रयत्न कर रहे हैं वह ऐसा संघ है जिसका उदाहरण संसार-भर में नहीं है क्योंकि अब तक ब्रिटिश-शासन-पद्धति के कारण तथा रियासतों से उनकी संधियों और राजीनामों के कारण हम इस देश में एक शक्तिशाली केन्द्र रखते चले आये हैं। अन्य अनेकों देशों में जहां संघ-शासन की स्थापना हुई वहां स्वतंत्र सर्वोच्च अधिकार प्राप्त प्रदेशों को सम्मिलित होने के आधार पर हुई। लेकिन यहां सन् 1935 तक सारी समस्या विकेन्द्रीकरण की थी। दूसरी बात यह है कि 15 अगस्त तक ब्रिटिश भारत की शासन-पद्धति के अन्तर्गत केन्द्र और भारतीय रिसासतों के मध्य एक विलक्षण-सा संबंध था। लोगों को इस बात के लिये चिन्तित रहने से कि प्रान्तों और रियासतों में आरम्भ से ही समानता रहनी चाहिये, कोई लाभ नहीं। हमारे अंत:करण शुद्ध नहीं हैं और यदि यह प्रणाली तर्कहीन है तो हमें यह स्मरण रखना चाहिये कि तर्क सदैव राजनीति में लागू नहीं होता है, हमने यह देखा है। उदाहरणस्वरूप अंग्रेजों ने, जो कि वास्तव में तर्कहीन व्यक्ति हैं अपने विधान में खूब सफलता प्राप्त की। अत: हमें यथासंभव सुन्दर रीति से भारत में राष्ट्रीय अखंडता स्थापित करनी है। केन्द्र और प्रान्तों के बीच इस संबंध के प्रश्न को एक केवल राजनैतिक रचना और अधिकारों का पृथक्करण ही समझा जाता है। लेकिन जो चीज कि इस संबंध को अंत में निश्चित करेगी वह आर्थिक घटनायें तथा माली (फाइनेन्शियल) विचार होंगे। सम्मानपूर्वक क्या मैं यह कह सकता हूं कि हम बहुधा अपने विधान बनाने में तथा विचार सामग्री प्राप्त करने में 19वीं शताब्दी के ब्रिटेन के राजनैतिक सिद्धांत के विधान पर निर्भर हैं? संघ-शासन पद्धति अथवा किसी विशेष प्रकार की

शासन-पद्धति पर भावात्मक रूप से सोचने में, कि उनमें कुछ ऐसे विशिष्ट गुण हैं जो उनको स्वयं वांछनीय बना देते हैं, कुछ संकट हैं। हमें सदैव किसी अनुकरण के उल्लेख करने की रुचि है और यह वाद-विवाद करने की कि जब तक क, ख और ग अधिकार संसार के किसी विधान के अंतर्गत नहीं हैं तो हम उन्हें अपने देश में भी नहीं रख सकते हैं। इस प्रकार से राजनैतिक संस्थाओं की नकल, दूसरे देशों की राजनैतिक संस्थाओं के आधार पर, अपने देश में राजनैतिक संस्था स्थापित करने में सदैव कुछ न कुछ संकट रहता है। अफ्रीका में बन्दरों का एक दल है जो मनुष्यों के मकान की ठीक-ठीक नकल करता है और फिर उसके अन्दर रहने की अपेक्षा वह उसके बाहर रहता है। अन्य राजनैतिक संस्थाओं के आधार पर संस्थायें स्थापित करने से ये संस्थायें स्पष्टताओं के ग्रहण करने और तत्वों को छोड़ने के संकट से नहीं बच सकती हैं। हमें अपने देश की परिस्थितियों के अनुसार न कि किसी भावमूलक सिद्धान्त पर इस पद्धति का निर्माण करना है। हमारे देश में हमारी आवश्यकताओं और हितों के लिये किसी विशेष उपचार की आवश्यकता है और कोई व्यक्ति भी यह नहीं मानता कि इस विशाल देश में, जिसका इतना बड़ा क्षेत्र है और जिसमें असंख्य जन हैं, एकात्मक राज्य-प्रणाली द्वारा शासन किया जा सकता है। एक फ्रांसीसी राजनीतिज्ञ ने कहा है कि ''आवश्यकता से अधिक केन्द्रीकरण प्रदेशों को अशक्त बना देता है और केन्द्र में बौखलाहट उत्पन्न कर देता है। एकरूपता प्राप्त करने के लिये अनुचित केन्द्रीकरण कोई साधन नहीं है।" वास्तव में हम इस देश में एकीकरण करना नहीं चाहते हैं बल्कि कुछ खास विषयों में एकरूपता लाना चाहते हैं। लेकिन मैं इस बात पर जोर दूंगा कि हमें विकेन्द्रीकरण की प्रवृत्ति से रक्षा करना है जो कि सदैव पैदा होती रहेगी और हमें अपने राष्ट्रीय संगठन को भी ध्यान में रखना है जिसको हमने प्राप्त कर लिया है और जिसकी अपनी अमूल्य निधि के समान हमें रक्षा करनी है। अध्यक्ष महोदय, अंग्रेज मित्रों द्वारा यह तर्क उपस्थित किया जाता है कि इस देश को ब्रिटिश सरकार की शासन सम्बन्धी इकाई की एक देन मिली है। नि:संदेह इसमें कुछ सत्य है, परन्तु इसमें भी झूठ नहीं है कि जैसे जैसे राष्ट्रीय आन्दोलन जोर पकड़ता गया वैसे-वैसे ही, ब्रिटिश सरकार ने इस देश में हर प्रकार की फूट और कुसंगठन की प्रवृत्ति को प्रोत्साहित किया, जिसका प्रत्यक्ष फल आज हमारे सामने विभाजन के रूप में है। दुर्भाग्य से हम इस फूट की दुष्प्रवृत्ति के आसानी से शिकार बन जाते हैं। यद्यपि यह असत्य-सा प्रतीत होगा परन्तु एक शक्तिशाली केन्द्र ही पर्याप्त प्रान्तीय स्वायत्त शासन का निर्माण कर सकता है और विकेन्द्रीकरण कर सकता है। आपके सामने जो योजना पेश

[श्री जी.एल. मेहता]

है उसके अंतर्गत यह मोटे रूप से कहा जा सकता है कि आर्थिक जीवन को नियमित करने का अधिकार प्रांतों और केन्द्र में बांट दिया गया है और आर्थिक तथा सामाजिक जगत में प्रान्तीय उत्तरदायित्वों और अधिकारों के लिये वृहद् क्षेत्र है। फिर भी हमें सामान्य नागरिकों की आवश्यकता को दृष्टिकोण में रखते हुये इस समस्या का निर्णय करना है और यह देखना है कि किस प्रकार उनको संतुष्ट किया जा सकता है। हमें अपने आपको राजनैतिक रचना तथा उसके कुशल संचालन में ही नहीं भुला देना है।

वास्तव में केवल दो मुख्य बातें हैं जिनके द्वारा हमें इस प्रश्न का निर्णय करना है, अर्थात् एक अच्छी राज्य व्यवस्था के लिये क्या आवश्यक है तथा लोगों की सामाजिक आवश्यकताओं के लिये क्या उपयोगी है। इन आवश्यकताओं की, चाहे भौतिक हों चाहे सांस्कृतिक, पूर्ति की जा सकती है। यदि विभिन्न प्रान्तीय सरकारें इनको पूरा करने में समर्थ हों–उन आवश्यकताओं को पूरा करने में जिनकी मांग आज नागरिक करते हैं।

अध्यक्ष महोदय, हमें यह भी नहीं भूल जाना चाहिये कि आर्थिक शक्तियां और भेदनीति वर्तमान समय में हमें शक्तिशाली केन्द्र बनाने के लिये विवश करती हैं। यदि हम आर्थिक और सामाजिक उन्नति के लिये संगठन करना चाहते हैं जिस प्रकार कि मनुष्य युद्ध के लिये संगठन करते हैं तो हमारा भावी राज्य वास्तविक अर्थ में सत्ता सम्पन्न राज्य होना चाहिये। समाज सेवा करने वाला होना चाहिये। उसे बहुत धन की आवश्यकता होगी और इन उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिये प्रायः समान आर्थिक परिस्थितियों का निर्वाह करना होगा।

सहगामी सूची के विषयों में ''योजना बनाने'' के विषय को सम्मिलित करने पर मेरे मित्र श्री सन्तानम् का विरोध सुनकर मुझे आश्चर्य हुआ। और हो भी क्या सकता था? केन्द्र की योजनायें होती हैं प्रान्तों की योजनायें होती हैं तथा कुछ देशी रियासतों की अपनी योजनायें होती हैं। श्री नियोगी की अध्यक्षता में योजना-परामर्शदातृ-समिति (Advisory Planning Committee) ने इस वर्ष के आरम्भ में अपनी रिपोर्ट में कहा है कि उन्नति के विषय में केन्द्र और प्रांत की सरकारों को संगठित होकर संयुक्त प्रयत्न करना चाहिये और जहां तक भी हो सके अपने आर्थिक साधनों को समुन्नत करने के लिये एक ही नीति को स्वीकार करना चाहिये। वास्तव में योजना बनाने का विषय सहगामी....

***श्री के॰ सन्तानम्** (मद्रास: जनरल): मैं वक्ता का ध्यान इस ओर आकर्षित करना चाहूंगा कि मैंने ''योजना बनाने'' के विषय को विधान के अलग परिच्छेद में रखने के लिये कहा था न कि उस पर केवल एक मुद्दे के रूप में विचार करने के लिये। केन्द्र और प्रान्तों के मिलकर योजना क्रियान्वित करने पर मैंने कोई विरोध नहीं किया।

***श्री जी॰एल॰ मेहता:** यदि यही बात है तो मैं समझता हूं कि मेरे मित्र राष्ट्रीयकरण की योजना को सहगामी विषय-सूची में रखने के विरोध में नहीं हैं। किसी हालत में भी योजना का विकास, निर्देशन तथा उसको क्रियान्वित करने की विधि केन्द्र से ही प्राप्त होगी और ऐसे निश्चय विभिन्न प्रदेशों के सहयोग के साथ पूर्ण किये जायेंगे। आर्थिक, शिल्प संबंधी और विज्ञान संबंधी प्रगतियों ने केन्द्र और प्रदेशों में अधिकारों के बंटवारों को अप्रचलित बना दिया है। संयुक्त राष्ट्र अमेरिका के टेनिसी घाटी अधिकार को लीजिये। उसकी सफलता ने संघीय एजेंसी को स्थापित करने से प्रदेश के अधिकारों तथा शासन-व्यवस्था में क्षति होने के भय को निर्मूल सिद्ध कर दिया। हम इस प्रकार का संगठन कर सकते हैं कि केन्द्रीय उत्पादन भी हो और प्रान्तीय उत्तरदायित्व भी बने रहें। चाहे कैसा भी वैधानिक प्रबन्ध हो केन्द्र और प्रान्तों के संबंध का निर्णय आर्थिक शक्तियों तथा प्रवृत्तियों और माली विचार-विमर्शों द्वारा होगा। आजकल व्यवसाय, व्यापार और उद्योग तथा इनमें परस्पर आर्थिक संबंध का क्षेत्र राष्ट्रीय है और नियम बनाने के आशय से इनको सरलतापूर्वक प्रान्त और संघ में नहीं बांटा जा सकता है। अध्यक्ष महोदय, श्री सन्तानम् ने कल संघ की सूची में उद्योग-धन्धों के बारे में कुछ कहा था। मद 6 में रक्षा संबंधी उद्योगों के अतिरिक्त मद 65 में उद्योग-धंधे की उन्नति का उल्लेख है जिसमें जनता के हित के लिये संघ के कानून द्वारा प्रगति को संघ के नियंत्रण में रखना आवश्यक कहा गया है। इस समस्या पर विचार करने की यही विवेकपूर्ण विधि है। सन् 1945 में उद्योग-धंधे संबंधी नीति की घोषणा में भारतीय सरकार ने यह कहा था कि जिन उद्योग-धंधों में एक ही नीति वांछनीय समझी जाये उनको केन्द्र के नियंत्रण में लाना चाहिये। क्या हम भावी केन्द्रीय सरकार में यह विश्वास नहीं कर सकते कि वह इस बात का निश्चय करे कि कौन-कौन से उद्योग-धंधे रक्षा के लिये महत्वपूर्ण हैं, कौन-कौन से प्रमुख उद्योग धंधे हैं और ऐसे कौन-कौन से उद्योग हैं जो कि अन्तर्प्रान्तीय हैं और केन्द्र के नियंत्रण में आने चाहियें? श्रम के संबंध में तो हम जानते हैं कि कई कारणों से एकरूपता वांछनीय है, अन्यथा एक प्रान्त के पिछड़ जाने और दूसरे के उससे

[श्री जी.एल. मेहता]

आगे बढ़ने की आशंका है। इसलिये राष्ट्रीय आधार पर नियम बनाने की बात में बल है। देशी रियासतों के संबंध में, कुछ उल्लेखनीय अपवादों सहित, उदाहरणार्थ श्रम संबंधी कानून तथा कर-निर्धारण की परिस्थितियां आवश्यक परिमाण की नहीं हैं। हमें औद्योगिक नीति, कर-निर्धारण और श्रम संबंधी कानूनों के दायरे में.....

***श्री एच॰वी॰ कामतः** श्रीमान् जी, क्या हस्तलिखित प्रति से पढ़ने की सदस्य को आज्ञा है?

***श्री जी॰एल॰ मेहताः** मैं पढ़ नहीं रहा हूं, लेकिन यदि आप मेरा पढ़ना पसंद नहीं करते, यदि यही आपका निर्णय है.....।

***अध्यक्षः** मैं मानता हूं कि सदस्य पढ़ नहीं रहा है। उसके सामने केवल नोट है।

श्री जी॰एल॰ मेहताः यदि श्री कामठ, जिनके समान धाराप्रवाह भाषण देने की प्रतिभा मुझमें नहीं है, तत्क्षण कृत भाषण दे सकते हैं, तो मैं उनसे निवेदन करूंगा कि वे मेरा अनुसरण करें।

अध्यक्ष महोदय, किसी समय भी भारतीय एकता का महत्व इतना स्पष्ट नहीं हुआ जितना हमने युद्धकाल और उसके पश्चात् अनुभव किया। उदाहरणस्वरूप खाद्य विषय, मूल्य नियंत्रण का पूरा विषय, राशनिंग का सम्पूर्ण विषय, इन सबके लिये अखिल भारतीय आधार पर संगठन और प्रगति करने की आवश्यकता है जिसमें प्रादेशिक प्रतिबंधों या अन्तर्प्रान्तीय द्वेष के लिये स्थान नहीं है। इन समस्याओं के लिये हमें एक विस्तृत और व्यापक आर्थिक नीति की आवश्यकता है जो केवल हमारी भौतिक प्रगति के लिये ही आवश्यक नहीं है वरन् हमारी राष्ट्रीय स्थिति के लिये भी आवश्यक है। कई बातों में मिसाल के तौर पर जंगी और व्यापारी जहाजी बेड़े के संबंध में, हवाई जहाजी बेड़े की विभिन्न शाखाओं की शिक्षा के संबंध में, उच्च शिल्पकला शिक्षण-संस्थाओं के शासन-प्रबन्ध के संबंध में, उच्च शिक्षा के एकीकरण के लिये और विशेषकर उच्च शिल्पकला संबंधी शिक्षा के लिये हमें आवश्यकता है कि ये अखिल भारतीय नीति तथा उपायों के अधीन रहें। इस अभिप्राय से शक्तिशाली और निर्बल केन्द्र की साधारणरूप में व्याख्या नहीं की जा सकती है जैसा कि श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर ने बताया है।

कुछ विशेष मदों के लिये तुम्हें जम कर बैठना है और फिर यह निश्चय करना है कि वह मद वास्तव में केन्द्र द्वारा अच्छे रूप में क्रियान्वित किया जा सकता है या प्रान्तों द्वारा।

मैं केवल एक बात और कहना चाहता हूं। हमें यह नहीं भुला देना चाहिये कि प्रान्तों का अधिक अधिकार मांगने का एक प्रमुख कारण आर्थिक प्रगति की आवश्यकता है। हमें इस देश से आर्थिक असमानता को दूर करना है। हमें सम्पूर्ण देश में योजना को क्रियान्वित करना है। हमें यह देखना है कि जो क्षेत्र बहुत पिछड़े हुये हैं और उन्नत नहीं हैं उनको अग्रमण्यता दी जाये। यदि यह नहीं किया जायेगा तो इन भागों का निम्न जीवनयापन और न्यून राष्ट्रीय आय अन्य भागों के उच्च परिमाण के लिये संकट उत्पन्न करेगा। अन्तर्प्रान्तीय ईर्ष्या दूर करने के लिये, समस्त देश की आर्थिक प्रगति के लिये एक सुन्दर सक्रिय योजना की बड़ी आवश्यकता है। लेकिन फिर वही प्रश्न होता है कि इसके अधिकारी कौन हैं? जब तक कि कोई राष्ट्रीय अधिकारी न हो और जब तक कि साधनों के विभाजन करने और अग्राधिकार के निर्णय करने के लिये और इन विभिन्न योजनाओं के एकीकरण करने के लिये किसी को अधिकार न हो तो हम अपने देश के पिछड़े हुये या निम्नोन्नत क्षेत्रों की वास्तविक उन्नति नहीं कर सकते हैं।

कनाडा में संघ और प्रान्तों के संबंधों पर रायल कमीशन की रिपोर्ट से उद्धृत करने के अतिरिक्त मैं और किसी श्रेष्ठ विधि से अपने वक्तव्य को समाप्त नहीं कर सकता हूं और यदि ऐसी दशा में मैं थोड़ा-सा अंश पढ़ूं तो मुझे आशा है कि मेरे मित्र श्री कामठ किसी प्रकार की आपत्ति नहीं करेंगे।

> **''नागरिकों की राज्यनिष्ठा के लिये राष्ट्रीय संगठन और प्रांतीय स्वशासन को प्रतियोगी के समान नहीं समझना चाहिये क्योंकि वे एक ही वस्तु संघीय-पद्धति के दो रूप हैं। राष्ट्रीय संगठन प्रांतीय स्वशासन पर आश्रित रहना चाहिये और जब तक समस्त देश में राष्ट्रीय संगठन की भावना विद्यमान न हो, प्रांतीय स्वशासन स्थापित नहीं किया जा सकता।''**

***एक माननीय सदस्य:** विवादन्तक प्रस्ताव।

***सर ए॰ रामास्वामी मुदालियार** (मैसूर): अध्यक्ष महोदय, कुछ संकोच के साथ मैं इस वाद-विवाद में भाग लेने का साहस करता हूं। यह न समझा जाये

[सर ए. रामास्वामी मुदालियार]

कि मैं रियासतों की ओर से बोल रहा हूं, यद्यपि वह मेरा प्रमुख उत्तरदायित्व है। मैं आशा करता हूं कि परिषद् मुझे संघ की सभी इकाइयों की ओर से बोलने और इस समय विवादान्तर्गत विषय पर अपने स्पष्ट विचार प्रकट करने की आज्ञा देगी। सर्वप्रथम मैं यह कह दूं कि इस परिषद् के प्रत्येक सदस्य की भावनाओं से मैंने यह समझा है कि सभा में ऐसा कोई व्यक्ति नहीं है जिसकी यह भावना हो कि केन्द्र शक्तिशाली न हो। केन्द्र और प्रान्तों में यह कोई रस्साकशी नहीं है। एक दृढ़, शक्तिशाली, अपने विचारों से परिचित तथा अपनी नीति को क्रियान्वित करने में निडर केन्द्र की आवश्यकता की अवहेलना करने का यह विषय नहीं है। हम तो ऐसा ही केन्द्र चाहते हैं। जो रियासतें इस संघ में सम्मिलित हुई हैं वे अपने पूरे खुले दिल से सम्मिलित हुई हैं। (*करतल ध्वनि*) इस संघ को सफल बनाने की इच्छा से और इस उत्कंठा से हम इस संघ में सम्मिलित हुये हैं कि यह संघ जहां तक हो सके राष्ट्रमंडल में सम्मानित स्थान पा जाये, इसके प्रतिनिधित्व मानवता की अंतिम सीमा तक प्रगति कर सकें, अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलनों में उनके भाषण और लेख इस प्रकार के हों कि वे अद्वितीय माने जायें। *(घोर करतल ध्वनि)* इस कारण अध्यक्ष महोदय, ऐसा कोई संदेह न रहे कि इस सभा में ऐसा कोई व्यक्ति है जो रियासतों का प्रतिनिधि हो अथवा रियासतों की ओर से बोल रहा हो, प्रादेशिक इकाई का प्रतिनिधि हो अथवा उसकी ओर से बोल रहा हो जो इस केन्द्र के महत्व को, केन्द्र के अधिकारों को अथवा उन सत्ताओं को जिनका केन्द्र प्रयोग करना चाहता है, कम करने की किंचितमात्र इच्छा रखता हो। यद्यपि प्रान्तीय स्वशासन नाम की कोई वस्तु नहीं है, यह तो मिथ्या नाम है क्योंकि अधिकारों का विभाजन तो केन्द्र और प्रान्तों में हो रहा है फिर भी यदि प्रान्तीय स्वायतशासन के संबंध में कभी-कभी धीमी, कभी-कभी घोर और कदाचित कभी-कभी बड़ी साहसपूर्ण बात उठाई गई है तो यह इसी कारण है कि इस प्रश्न का एक और पहलू भी है जिसका ख्याल इस महान परिषद् को रखना है। योजना से क्या आशय है और इससे क्या लाभ होगा? इन बातों को पूर्णतया समझने के लिये उसके दोनों पहलुओं अर्थात उससे लाभ और हानि का अध्ययन कर लेना चाहिये। अध्यक्ष महोदय, मैं आपको यह बता दूं और मुझे आशा है कि आप परिषद् के अध्यक्ष होने के नाते मुझसे सहमत होंगे, चाहे केन्द्रीय सरकार के सदस्य होने के नाते न हों, कि प्रादेशिक इकाइयों के प्रमुख शासन प्रबन्धकर्ता भी कम से कम उतने ही बहादुर हैं जितने कि केन्द्र के प्रमुख शासनकर्ता। उनके सामने भी ऐसी समस्यायें हैं जो अपने दायरे में पेचीदी, गम्भीर और कठिन हैं। बड़ी-बड़ी आर्थिक समस्यायें

हैं, ऐसी-ऐसी शिकायतें हैं जिनको दूर करना कठिन है, ऐसी-ऐसी अभिलाषायें, आशायें और उत्कण्ठायें हैं जिनकी पूर्ति करना कठिन है। श्रीमान् जी, यह याद रखिये कि इस प्रकार के बहुत-से कार्य-व्यवहार जो कि प्रत्येक व्यक्ति के सुख का साधन हो सकते हैं, प्रान्तों के या प्रादेशिक इकाइयों के अंतर्गत आते हैं न कि केन्द्र के। प्रांतों में आप लोगों पर ही निःशुल्क अनिवार्य शिक्षा देने का वह भार है जिसको आपने स्वयं स्वीकार कर लिया है। आप पर उचित चिकित्सा संबंधी व्यवस्था, स्वास्थ्य रक्षा, स्वास्थ्य-वृद्धि, 25 या 27 वर्ष की औसत आयु से अधिक जीवित रहने के लिये मनुष्यों को साधन देने—इस देश में हमारे भाग्य में अभी तक यही औसत आयु रही है—का भार है। आप पर यह भी भार है कि आप यह देखें कि निवासगृह तथा अन्य सुविधाओं की परिस्थितियां पर्याप्त हैं। ये समस्त उत्तरदायित्व प्रान्तीय शासन-व्यवस्था पर हैं। इन उत्तरदायित्व के भार का ही कारण है कि प्रादेशिक इकाइयों के शासनकर्ता यह अनुभव करते हैं कि अधिकारों के विभाजन में विशेषतया कर-निर्धारण के विषय में उनको इन उत्तरदायित्वों को पूर्ण करने के लिये पर्याप्त साधन नहीं मिले हैं। हम यह सोचकर अपनी आत्मा पर मिथ्या प्रशंसा के लेप न करें कि यदि हम शक्तिशाली केन्द्र का समर्थन करते हैं तो हम अच्छे देशभक्त होंगे तथा जो इन साधनों की पुष्ट जांच का समर्थन करते हैं वे ऐसे व्यक्ति हैं जिनमें देशभक्ति की राष्ट्रीय भावना पर्याप्त मात्रा में नहीं है। इसलिये मैं अपने दोनों मित्रों श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर तथा पूर्व वक्ता और मेरे मित्र श्री जी॰एल॰ मेहता द्वारा व्यक्त भावनाओं के स्वर में स्वर मिलाऊंगा कि जिस विषय पर वाद-विवाद करना है तथा जिसका पूर्णतया विश्लेषण करना है वह शक्तिशाली केन्द्र तथा निर्बल केन्द्र अथवा केन्द्र, संघ और प्रान्तों में उत्तरदायित्वों और अधिकारों के विभाजन का सामान्य विषय नहीं है बल्कि वास्तविक साधनों का जो कि संघ-अधिकार कमेटी की रिपोर्ट में दिये गये हैं। मैं यह भी कह दूं कि अपने मित्र श्री अल्लादी कृष्णास्वामी की यह अंतिम बात सुनकर मुझे खुशी हुई जिसमें उन्होंने सैद्धान्तिक उदाहरणों को, जो कि संघ संबंधी विधानों अथवा मूल ग्रन्थों में से उद्धृत किये जाते हैं, अलग फेंक दिया और हम से इस पत्र में दिये हुये वास्तविक प्रस्ताव पर विचार करने के लिये तथा उसका विश्लेषण करने के लिये कहा। मेरे ख्याल से ऐसा करना कल्याणकारी होगा। इसी दृष्टिकोण से मैं इन प्रस्तावों की परीक्षा करने का साहस करता हूं।

श्रीमान् जी, इस (रिपोर्ट) का मुख्य लक्षण इसके कर-निर्धारण के प्रस्ताव हैं। यही एक चीज है जिसने अधिकांश उन लोगों को भयभीत कर दिया है जिन्होंने

[सर ए. रामास्वामी मुदालियार]

इस समस्या का प्रादेशिक इकाइयों के दृष्टिकोण से अध्ययन किया है। मैं पहले भी कह चुका हूं और उसको फिर दुहराता हूं कि प्रान्तों पर उन अति गंभीर उत्तरदायित्वों को, जो कि राष्ट्र-निर्माण के कार्य कहे जाते हैं, लाद दिया गया है। अध्यक्ष महोदय, यह याद रखिये कि राष्ट्र-निर्माण कार्य वे कार्य हैं जो राष्ट्र का निर्माण करते हैं और ये प्रादेशिक इकाइयों के पूर्ण उत्तरदायित्वों में है न कि केन्द्र के। देश की रक्षा का अधिक महत्वपूर्ण उत्तरदायित्व केन्द्र पर है। क्योंकि यदि हमसे परिश्रम द्वारा प्राप्त स्वतंत्रता छिन गई तो फिर अन्य कोई वस्तु अपनाने के योग्य नहीं है। मैं इस विचार का प्रशंसक हूं। मैं चाहता हूं कि रक्षा के लिये समस्त आवश्यक अधिकार केन्द्र के पास रहें। मैं चाहता हूं कि देश की रक्षा करने के मुख्य उद्देश्य की पूर्ति के लिये समस्त आवश्यक साधन केन्द्र को प्राप्त हों। इस पर कोई प्रश्न नहीं उठता। लेकिन हमें यह भी याद रखना चाहिये, जैसा कि मैंने कहा था कि इस चित्र का दूसरा पहलू भी है कि रक्षा संबंधी कार्य तब तक ठोस नहीं हो सकते जब तक कि राष्ट्र स्वयं तथा व्यक्ति जो राष्ट्र का निर्माण करता है शक्तिशाली न हो, जब तक उनका पुष्ट पोषण न हो, जब तक उनको उचित शिक्षा न दी जाये, जब तक कि वे राष्ट्र के सच्चे वीर योद्धा के समान स्थान न पा सकें—और ये उत्तरदायित्व मैं फिर कहूं कि प्रान्तों पर हैं न कि केन्द्र पर।

श्रीमान् जी, अब हम इस रिपोर्ट में जो प्रान्तों या प्रादेशिक इकाइयों को कर-निर्धारण के अधिकार दिये गये हैं उनकी परीक्षा करें। वे 40 से 58 मद तक हैं। इससे अधिक प्रान्त और क्या चाहता है? कर-निर्धारण के 19 मद तो हैं लेकिन हम उसकी परीक्षा करें। सभा मुझे दो मिनट के लिये एक-एक मद पर शान्ति के साथ विश्लेषणात्मक परीक्षा करने के लिये क्षमा करेगी। पहला मद मालगुजारी का है। श्रीमान् जी, यह प्रसिद्ध सत्य है कि वर्षों तक यह आन्दोलन रहा कि बन्दोबस्त फिर से न किया जाये और जहां तक हो सके मालगुजारी के प्रश्न को अलग रखा जाये। प्रान्तों के मंत्री और प्रधान मंत्रियों को, जिनका वयस्क मताधिकार द्वारा निर्वाचन हुआ है और कौंसिलों में चुनाव संबंधी अधिकारों का सम्पूर्ण भार जिन पर है, मालगुजारी बढ़ाने में बड़ी कठिनाई होगी। आन्दोलन के होते हुये कौन-सा प्रधानमंत्री ऐसा करने का साहस कर सकता है? क्या मैं यह भविष्यवाणी करने का साहस करूं कि मालगुजारी, बढ़ती हुई आय होने के अतिरिक्त भविष्य में घटती हुई आय होगी, इस कारण मालगुजारी से, जैसा कि समझा जाता है, अधिक आय नहीं होगी। मद 41 की ओर देखिये—निम्न पदार्थों पर कर—नशीले

पेय पदार्थ, अफीम तथा चिकित्सा और शृंगार-संबंधी सामग्री। नशीले पेय पदार्थों के संबंध में, अध्यक्ष महोदय, केन्द्र से निषेध की आज्ञा होने पर जिसे बहुत से प्रान्तों ने स्वीकार भी कर लिया है, और दोनों जनता की मांग तथा केन्द्र के आदेश द्वारा भी इसका प्रतिरोध होने के कारण हम नशीले पदार्थों से कितनी आय की आशा कर सकते हैं? अफीम पर केन्द्र का नियंत्रण है और यह अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों और नियमों के अधीन है। इसकी आय का क्षय होना निश्चित है। सूची में प्रान्तों के लिये आय का साधन होने के रूप में मद 41 को सम्मिलित करने को हम यह समझ लें कि वह हटाया हुआ है। कृषि संबंधी आय पर कर–इस मद को कृषि योग्य भूमि तथा उन पर उत्तराधिकार-कर के संबंध में मैं सम्पत्ति-कर (Estate Duty) के अंतर्गत रखता हूं। जब कि जमींदारी मिटाने का स्वर वायु में गूंज रहा है और मैं समझता हूं कि शीघ्र ही इसकी पूर्ति हो जायेगी, जब कि बड़ी-बड़ी जमींदारियों का बंटवारा हो जाना निश्चित है, जब कि कृषकों के स्वामित्व को प्रामाणित किया जा रहा है अथवा यथासंभव शक्य बनाया जा रहा है तो कृषि योग्य भूमि पर कर वास्तव में मालगुजारी का एक निर्बल साधन हो जायेगा और यदि आप उसे कृषि योग्य भूमि के संबंध से सम्पत्ति-कर में सम्मिलित करें तो दो एकड़ से चार एकड़ तक की जायदाद पर आप किस प्रकार का कर लगाना चाहते हैं?

***श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यरः** बंजर भूमि के संबंध का सम्पत्ति-कर भी यद्यपि केन्द्र द्वारा वसूल किया जायेगा परन्तु वास्तव में प्रान्तीय आय का साधन है।

***सर ए॰ रामास्वामी मुदालियारः** रिपोर्ट द्वारा, जिसमें इस प्रश्न पर विचार किया गया है, मैं इस बात से परिचित हूं और शीघ्र ही मैं उसका उल्लेख करूंगा। कृषि योग्य भूमि पर सम्पत्ति-कर, मेरे विचारानुसार भ्रमपूर्ण है। इस कर को लगाने का अधिकार रखते हुये भी आप उसे प्राप्त नहीं कर सकते हैं। और फिर श्रीमान् जी, जमीन, जायदाद तथा चौके और खिड़की (hearths and windows) पर कर! मैं समझता हूं कि यह मद सन् 1935 के एक्ट के अंतर्गत है और कुछ कबाइली इलाकों में म्यूनिसिपल तथा डिस्ट्रिक्ट बोर्डों को चौकों और खिड़की (hearths and windows) पर कर लगाने का अधिकार है। किसी प्रकार भी ये ऐसे कर नहीं हैं जिनसे प्रान्तों को अधिक आशा हो। ये तो बोर्डों के लिये कर हैं न कि प्रांतों के लिये आमदनी के जरिये। कृषि योग्य भूमि पर कर तथा सम्पत्ति-कर के संबंध में मैं कह ही चुका हूं।

[सर ए. रामास्वामी मुदालियार]

मद 46—खनिज-सम्पत्ति पर कर, खनिज पदार्थ संबंधी उन्नति के संबंध में संघ पार्लियामेंट के किसी एक्ट द्वारा लगाये गये प्रतिबंधों के अधीन। यहां फिर पार्लियामेंट से ही प्रतिबंध लगाये जाते हैं। मद 47 वैयक्तिक-कर (Capitation tax)—हां, यह वास्तव में आय का अच्छा साधन होगा, यदि कोई प्रान्तीय प्रधान मंत्री इस कर को लगाये जो कि पुराने जमाने के लगाये गये जजिया-कर का दूसरा रूप होगा। मुझे आश्चर्य है कि कितने प्रान्तीय प्रधान मंत्री और उनके साथी प्रान्तीय व्यवस्थापिकाओं में इस कर के लगाने का प्रस्ताव रखने की धृष्टता करेंगे। मद 48—पेशा, व्यापार, व्यवसाय तथा नौकरियों पर कर। यह भी बहुत कम आय देने वाला कर है, जो खास कर स्वायत्त शासन के अधीन संस्थाओं के लिये है। मद 49—जानवरों तथा नावों (boats) पर कर—कृषि प्रधान तथा देहाती इलाकों के भारी दबाव के होने पर जो कि नई व्यवस्थापिकाओं पर अवश्य पड़ेगा, मुझे फिर आश्चर्य होता है कि कितने लोग जानवरों तथा नावों पर कर लगा सकेंगे। मद 50—सामान की बिक्री तथा विज्ञापनों पर कर—यह एक कर है जिससे आजकल आय की जाती है। लेकिन मैं यह साहसपूर्वक कह सकता हूं कि इस कर की भी सीमा है। जहां तक हो सके यह कर सब प्रान्तों में लगभग समान रूप से लगाना चाहिये। यदि आप बिक्री पर कर बढ़ाते हुये जायेंगे तो अंडे के लोभ में आप मुर्गी को मार डालेंगे। क्रमागत ह्रास का नियम प्रयोगान्वित होगा जैसे कि आने वाले माल पर आयात-कर के मामले में हुआ।

सूची में इसके बाद 'मद 51—सड़कों पर चलने वाली गाड़ियों पर कर' चाहे वे यंत्र द्वारा संचालित हों अथवा नहीं मय ट्राम गाड़ियों के। यह स्थानीय संस्थाओं के लिये आय का साधन है। इसके बाद मद 52 है—बिजली की बिक्री तथा खर्चे पर कर। जब कि यह प्रयत्न किया जा रहा है कि प्रान्तों में बिजली की प्रगति हो, जब कि उद्योग स्थापित करने के लिये विद्युत-शक्ति को सस्ता करना चाहा जा रहा है जिससे कि यथासंभव अधिक से अधिक उद्योग प्रान्तों में स्थापित किये जा सकें तो विद्युत के प्रयोग पर कर बढ़ाना तथा उससे अधिक आय की आशा करना मेरे ख्याल से एक काल्पनिक आशा में प्रवृत्त होना है।

इसके बाद ''मद 53—खपत, प्रयोग अथवा बिक्री के लिये स्थानीय क्षेत्रों में सामान के लाने पर कर'' यह एक प्रकार का म्यूनिसिपलिटी तथा अन्य स्वशासित संस्थाओं के लिये चुंगी के प्रकार का कर है।

मद 54–विलास सामग्री पर कर, मय विनोद, मनोरंजन, शर्त तथा जुए पर कर के। यहां फिर शर्त तथा जुए पर प्रान्तीय मंत्रियों द्वारा कर हटाने का प्रयत्न है। कुछ भी हो जनमत शर्त तथा जुए के हटाने के पक्ष में है। घुड़दौड़ ही, जो कि अनेकों संघीय प्रदेशों में अनिश्चित-सी हो रही है, आय का एक साधन है जिससे अधिक आमदनी की जा सकती है। और विनोद पर कर! मैं आपको यह बताऊं कि संघ के अधिकृत क्षेत्र में जीवनशुष्क है और मैं नहीं समझता कि विलास सामग्री जैसी वस्तु पर कोई भारी कर उस साधारण मनुष्य के लिये वास्तव में सुख का लक्ष्य होगा जो कि परिवर्तन के लिये शराब की दुकान पर जाने के अतिरिक्त अब सिनेमा जायेगा। मद 55 के स्टाम्प शुल्क के संबंध है और मद 56 देश के अन्दर जल-मार्ग द्वारा सामान तथा यात्रियों पर कर एकत्रित करने के संबंध का है। प्रान्तों से आये हुये मेरे माननीय मित्र जानते हैं कि इस जरिये से क्या आय हो सकती है। मेरे ख्याल से बहुत कम प्रान्तों को इस मद से यथेष्ट आमदनी होती होगी।

अध्यक्ष महोदय, मैंने सोचा था कि चुंगी को हटाने का सुधार किया जायेगा। कई प्रान्तों में चुंगियां हटा दी गई हैं। बल्लियां लगाकर मार्ग रोकने के भद्दे ढंग को पुनः स्थापित करना कठिन होगा। यह प्रथा हमारे देश के अनेक शहरों में थी। मैं यह सोचने का साहस करता हूं कि चुंगियों से न तो अधिक आमदनी होगी और न समस्त प्रान्तों में इनको ग्रहण करना सम्भव होगा।

श्री एम॰ अनन्तशयनम आयंगर (मद्रास: जनरल): रियासतों में अब भी चुंगिया वर्तमान हैं।

***सर ए॰ रामास्वामी मुदालियार:** उनमें से बहुतों को हटा दिया गया है। बहुत थोड़ी सी रह गई हैं और उनको भी शीघ्र हटाया जा रहा है।

इसके बाद मद 58 'इस सूची में दिये गये विषयों से संबंधित फीस, परन्तु इसमें वह फीस शामिल नहीं है जो अदालतों में ली जाती है।' यह एक अपरिचित तथा अनिश्चित आय का साधन है जिस पर मुझे कुछ भी टीका नहीं करनी है।

इस रिपोर्ट के आखिरी पैरा 6 में यह कहा गया है:

''यह बिल्कुल स्पष्ट है कि हमने जिन करों का वर्णन किया है उनकी आय को संघ में लाने से प्रदेशों की आर्थिक दृढ़ता में कहीं-कहीं तो प्रचण्ड रूप से बाधा पड़ेगी; इसलिये हम सिफारिश करते हैं

[सर ए. रामास्वामी मुदालियार]

कि कुछ करों की आय का समय-समय पर संघ द्वारा निर्धारित आधार पर समर्पण या बंटवारे की व्यवस्था बना देनी चाहिए।''

इन सब अगर, मगर तथा सहायक और अधिकरण वाक्यखंड के होते हुये भी, प्रान्तों के लिये यह कम आय का साधन एक तुच्छ सांत्वना है। यह अस्पष्ट है और मायावी भी हो सकती है। आय बहुत कम है और उस पर भी संघ उस अनुपात और आधार को निर्धारित करेगा। मुझे आश्चर्य है कि कितने प्रान्तीय मंत्री ऐसी स्थिति से प्रसन्न होंगे।

अब मुझे केन्द्र की ओर आने दीजिये। अनेकों संघों की आय के साधनों की तुलनायें हमारे सामने की गई हैं। जैसा कि श्री जी॰एल॰ मेहता ने संकेत किया कि हमारा संघ अनेक बातों में विलक्षण है। हमें सर्वत्र जीवन-निर्वाह के माप तथा वास्तविकता पर भी विचार करना है और कम से कम इस समय तो उनका हवाला देते हुये विधान बनाना है। मैंने यह कह ही दिया है कि इस सभा में ऐसा कोई भी नहीं है जो कि एक ऐसे शक्तिशाली केन्द्र के विरुद्ध हो जिसके पास अपनी स्थिति को कायम रखने के लिये यथेष्ट साधन हों। लेकिन एक आधारभूत सत्य है जिसकी उपेक्षा की गई है और जो युद्धकाल में प्रचलित हो गया है—आय के साधनों में उन्नति करने की नई विधि। श्रीमान् जी, हमें यह याद रखना चाहिये कि प्रान्तों के पास निश्चित तथा निर्धारित साधनों के अतिरिक्त अन्य आय के साधन नहीं हैं, परन्तु केन्द्र के पास नासिक के छापेखाने का एक अनन्त आय का साधन है। मैं यह सावधानी से कह रहा हूं क्योंकि मैं जानता हूं कि विगत कुछ वर्षों में क्या होता रहा है। पुराना विचार, कि किसी देश की मुद्रा का पूर्ण विश्वसनीय आधार होना चाहिये, और नोटों के चलाने पर सोना, चांदी या अन्य कोई ऐसी वस्तु जमा होनी चाहिये, समस्त देशों में लुप्तप्राय हो गया है। आज हमारी मुद्रा को वह आधार प्राप्त नहीं है। यूनाइटेड स्टेट्स आफ अमेरिका तथा स्विट्जरलैंड को छोड़कर अन्य किसी देश में मुद्रा को वह विश्वसनीय आधार प्राप्त नहीं है जिस पर एक समय समस्त कागजी मुद्रा के चलाने पर आग्रह किया जाता था। अब किसी संकट-काल में आप अपनी मुद्रा को बढ़ा सकते हैं। आप सरकारी हुंडी चला सकते हैं। आप अपनी खुद की मुद्रा चला सकते हैं। मैं इस समय यह नहीं कह रहा हूं कि ऐसा करना उचित होगा। उससे महंगाई तथा अन्य ऐसे संकटों की संभावना हो सकती है, और मैं तो उन लोगों में से हूं जो यह विश्वास करते हैं कि वर्तमान काल में भी महंगाई को जितनी जल्दी तथा जिस प्रकार भी हो सके मिटाना है। केवल केन्द्र ही इसको मिटा सकता है।

(*हर्ष ध्वनि*)—इसलिये मैं इसका पक्ष-समर्थन नहीं करता हूं। लेकिन मैं यह सावधानीपूर्वक कहता हूं कि संकटकाल में जब कि आय के अन्य साधनों से लाभ नहीं उठाया जा सकता वे इस साधन को बढ़ा सकते हैं जैसा कि अव्यवस्थित काल में अन्य देशों ने किया है। लेकिन प्रान्त क्या कर सकता है? समय-समय पर वह कर्ज ले सकता है। लेकिन जैसा कि इतिहास बताता है, इससे सदैव सफलता प्राप्त नहीं की जा सकती है। इस हालत में मैं यह सोचने का साहस करता हूं कि प्रान्तीय स्वायत्त शासन, प्रान्तों पर निर्भर कुछ विषयों के होते हुए भी, वास्तव में तुच्छ प्रकार का होगा। श्रीमान् जी, रिपोर्ट में इस संबंध में जो कुछ कहा गया है उसकी प्रशंसा करते हुये मुझे यह भी कह लेने दीजिये कि चित्र का दूसरा पहलू भी है, जिस पर इस रिपोर्ट के निर्माताओं ने निःसंदेह विचार किया है। परन्तु फिर भी यह कहते हुये मैं समाप्त करूंगा कि मेरी इच्छा है कि वे चित्र के पहलू पर और अधिक विचार करते। मैं समाप्त कर चुका हूं।

***अध्यक्षः** मेरे पास अनेकों सदस्यों के नाम हैं जो बोलना चाहते हैं, परन्तु श्री रामास्वामी मुदालियर से वक्तव्य देने के लिये कहने से पूर्व ही विवादान्तक प्रस्ताव पेश किया जा चुका था।

***श्री आर०के० सिधवा** (मध्य प्रांत तथा बरारः जनरल): श्रीमान जी, विवादान्तक प्रस्ताव के रखने के पूर्व मैं आपसे एक बात पर ध्यान देने का निवेदन करूंगा। यह विषय बहुत महत्वपूर्ण है। यह भारत की आर्थिक स्थिति पर प्रभाव डालता है, इसलिये यह महत्वपूर्ण है। सदस्यों को अपने विचार प्रकट करने का यथेष्ट अवसर देना चाहिये। विवादान्तक प्रस्ताव स्वीकार करने से पूर्व मैं अध्यक्ष महोदय से यह निवेदन करूंगा कि वे यह देख लें कि दोनों पक्षों में वाद-विवाद हो गया है या नहीं। एक विचारधारा प्रकट की जा चुकी है और दूसरी विचारधारा प्रकट नहीं की गई है। वह होनी चाहिये। अतः मैं आपसे निवेदन करूंगा कि आप दोनों पक्षों को विचार प्रकट करने की आज्ञा दें ताकि सभा यह जान जाये कि वे इस महत्वपूर्ण विषय पर क्या विचार रखते हैं।

***अध्यक्षः** मैं पूर्णतया सभा के हाथों में हूं। लेकिन जहां तक वक्ताओं का संबंध है, मैं समझता हूं कि उनका समानता से प्रबन्ध किया गया है; तीन एक ओर और तीन दूसरी ओर, इसलिये एक पक्ष के वक्ता होने का प्रश्न ही नहीं है। मैं सभा के सामने यह रखना चाहूंगा कि वह और अधिक वाद-विवाद चाहती है। प्रश्न यह है कि अब विवादान्तक प्रस्ताव रखा जाये।

विवादान्तक प्रस्ताव अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्षः** मैंने इस ओर के (दाईं ओर को संकेत) अनेकों सदस्यों को बोलने का अवसर दिया है। इस ओर के (बाईं ओर को संकेत) मेरे पास थोड़े से नाम हैं। श्री बी॰ दास!

***श्री आर॰के॰ सिधवाः** अध्यक्ष महोदय, मैं आशा करता हूं आपके पास नामों की जो स्लिपें हैं आप उनके क्रम का उल्लंघन करेंगे। हमें भी बोलना है।

***अध्यक्षः** जो नाम मेरे पास हैं उनके क्रम का मैं उल्लंघन करूंगा। पहले एक बार मैंने कहा था कि मैं स्लिपों के क्रम पर ध्यान नहीं दूंगा। यदि कोई सदस्य खड़ा होता है तो वह मेरा ध्यान आकर्षित करेगा।

***श्री बी॰ दास** (उड़ीसाः जनरल): श्रीमान् जी, प्रान्तीय मालगुजारी और आय पर सर रामास्वामी मुदालियर का वक्तव्य सुनकर मुझे बड़ी खुशी हुई। सन् 1935 ई॰ के एक्ट के अंतर्गत कर के विभाजन में सन् 1933 ई॰ के पूर्व तक के सम्मिलित थे। मुझे बहुत आश्चर्य हुआ कि इस सभा के माननीय सदस्य सन् 1935 ई॰ के एक्ट के अंतर्गत कर-प्रणाली को कायम रखने का प्रयत्न कर रहे हैं। उस एक्ट का क्या आधार है? उस एक्ट ने समस्त अधिकार और समस्त साधन एक विदेशी सरकार को दिये। विदेशी सरकार के उस भूत ने भारत को छोड़ दिया है, लेकिन उस भूत की प्रणाली अब भी वर्तमान है। 1935 ई॰ के एक्ट ने समस्त साधन केन्द्र को दे दिये थे जिससे कि केन्द्र शासन कर सके, आतंक जमा सके और देश की आय को जिस प्रकार चाहे खर्च कर सके। इस माह की 15 तारीख से जनतंत्रात्मक राज्य हो गया है। यह चौथी रिपोर्ट है जिस पर हम वाद-विवाद कर रहे हैं और मैं यह न समझ सका कि किस जनतंत्रात्मक भावना से संघ-अधिकार-समिति की रिपोर्ट का मसविदा तैयार किया गया है। मुझे बड़ी खुशी हुई कि दो सज्जन श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर तथा सर गगनबिहारी लालू भाई मेहता सामाजिक भलाई तथा सामाजिक न्याय के बारे में बोले। मुझे सुखद आश्चर्य हुआ जबकि मैंने इन दोनों सज्जनों को, जो कि उच्च पद पर आसीन हैं तथा सर्वसाधारण की कोटि से ऊपर हैं, सामाजिक भलाई तथा सामाजिक न्याय पर बोलते हुये सुना। मैं समझता हूं कि श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर ने जो कि संघ-अधिकार-समिति के सदस्य हैं, जनता के साथ सामाजिक न्याय करने में रियासत के प्रमुख कर्तव्य की ओर ध्यान नहीं दिया। केवल विदेशी शासन-प्रणाली की नीतियों को चालू रखने के लिये जो कि खर्चीली तथा बहुत भारी हैं, हम सरकार या मंत्रिमंडल को अधिकार देने के लिये तत्पर नहीं हैं। रक्षा, हां वास्तव

में रक्षा तो होनी ही चाहिये। क्या रक्षा राष्ट्रीय प्रकृति तथा भारत की राष्ट्रीय आवश्यकताओं के अनुकूल होगी या वह पश्चिमी पूंजीवादी राष्ट्रों के जैसे कि अमेरिका और इंग्लैंड के समान होगी? मैं नहीं समझता कि संघ-अधिकार-समिति या संघ-विधान-समिति के सदस्यों ने कभी भी इस बात का अपने मस्तिष्क में आने दिया हो कि भारत की प्रकृति को केन्द्र के खर्चे की नीति में एक भिन्न प्रकार की पूर्वीय स्थिति की आवश्यकता होगी।

श्रीमान् जी, केन्द्र की ओर से कोई भी दान नहीं चाहता है। यद्यपि मैं एक अति निर्धन प्रान्त उड़ीसा का हूं, जिसका युद्ध के पूर्व प्रत्येक व्यक्ति पर $1^1/_2$ रु॰ खर्चा होता था, तो भी मैं इसे नहीं चाहता हूं, परन्तु करों का सुनीति युक्त विभाजन होना चाहिये। केन्द्रीय सरकार को मय गवर्नर-जनरल के या अध्यक्ष के जो कि 6 माह के अरसे में यहां हो जायेंगे, और मंत्रियों के सामाजिक भलाई को अपना प्रमुख कर्तव्य समझना चाहिये। कहीं भी न तो संघ-विधान में और न संघ-अधिकार-समिति की रिपोर्ट में ही मुझे केन्द्रीय सरकार के प्रमुख कर्तव्य की व्याख्या मिली। क्या यह केवल समस्त अधिकारों को ग्रहण करने के लिये है? कभी नहीं। हमें एक ऐसी शासन-प्रणाली का विचार करना पड़ेगा जिसके द्वारा कि कर द्वारा प्राप्त अधिकांश आय जो कि जनता से प्राप्त की जाती है पुनः जनता के ही काम में आये। शस्त्र बनाने या अणुबम बनाने के काम में उसको खर्च नहीं करना चाहिये। सर रामास्वामी मुदालियर ने प्रांतीय कर-निर्धारण का विश्लेषण किया और यह बताया कि किस प्रकार प्रांतों को केवल जीवन-यापन करने योग्य भत्ते पर रखा गया है। केन्द्र में विदेशी सरकार प्रान्तों से केवल तोपों की खुराक चाहती थी। अकाल तथा भुखमरी से विवश होकर लोग सेना में जाते थे, स्वेच्छा से नहीं, और ब्रिटिश साम्राज्य की रक्षा करते थे भारत साम्राज्य की उतनी नहीं। यह तीसरी बार है कि मैं सामाजिक न्याय और सामाजिक सुरक्षा के लिये निवेदन कर रहा हूं। समाचार-पत्रों से यह विदित हुआ है कि संघ-विधान-बिल का मसविदा बनाया जा रहा है या वह आधा बनाया जा चुका है। सरकार के समस्त अधिकार ग्रहण करने से कोई लाभ नहीं है। हम यह सोच सकते हैं कि व्यवस्थापिका के रूप में हम कार्य करेंगे परन्तु अवशिष्ट अधिकार सरकार को, प्रबन्ध-सभा (Executive) को सौंप दिये गये हैं। संघ-अधिकार-समिति की रिपोर्ट से मुझे विदित होता है कि प्रवृत्ति यह है कि वे अधिक अधिकार चाहते हैं। वे चाहते हैं कि धारा 126 (क) संघ-विधान बिल में सम्मिलित कर ली जाये जिससे कि अध्यक्ष, वर्तमान समय में गवर्नर-जनरल और मंत्रिमंडल को व्यापक अधिकार प्राप्त हो जायें।

[श्री बी. दास]

यह अभिलाषा क्यों है? अध्यक्ष या मंत्रिमंडल में इन शासनाधिकारों को केन्द्रित करने के लिये यहां उपस्थित मेरे साथियों के मन में यह लालसा क्यों है? व्यवस्थापिका को अपने जनतंत्रात्मक कार्यों को करना चाहिये तथा जनता को व्यवस्थापिका के द्वारा प्रबंध-सभा के कार्यों का, जो कि जनतंत्रात्मक सिद्धान्तों की पुष्टि करते हैं, नियंत्रण करना चाहिये। श्रीमान् जी, इसमें मैंने जनतंत्रात्मक किसी भावना को नहीं पाया।

परामर्शदातृ-समिति की चौथी रिपोर्ट हमें प्राप्त हुई है, हमें अब तक और भी अनेकों रिपोर्टें मिल चुकी हैं—जिन पर यहां वाद-विवाद करने का विषय नहीं है। अल्पसंख्यक जातियों के लिये कुछ रियायतों की सिफारिश की गयी थी। रियायत कौन नहीं चाहता? हम अपने अधिकार तथा विशेषाधिकार चाहते हैं और हम अपने समस्त आय के साधनों को मंत्रिमंडल के सुपुर्द करना नहीं चाहते हैं। सरकार के चलाने के लिये हम अपने समस्त आय-साधन सौंपना नहीं चाहते जो कुछ हम चाहते हैं वह यह है कि हमारे आय-साधनों का इस प्रकार विभाजन किया जाये कि वह जनता की भलाई पर खर्च हो। अतः मैं श्री अल्लादी के लिये कृतज्ञता प्रकट करता हूं कि उन्होंने इसका जिक्र किया। मैं अपने मित्र श्री गगनबिहारी लाल लालूभाई मेहता के लिये भी कृतज्ञता प्रकट करता हूं जो कि भारतीय व्यवसाय-मंडल (Indian Chamber of Commerce) के भूतपूर्व प्रधान रह चुके हैं और जो उन्नति द्वारा हित साधन तथा आर्थिक सुव्यवस्था के बारे में सोचते हैं। वे चाहते हैं कि बड़े-बड़े पूंजीवादी भारत में उन्नत हों। मैं चाहता हूं कि आधा कर सार्वजनिक भलाई के लिये, भुखमरी हटाने के तथा मनुष्यों के जीवन-स्तर को उन्नत करने के काम में आये। परन्तु यदि हम पूंजीवादियों का वर्ग उत्पन्न करें जिनमें बड़े-बड़े पूंजीवादी हों तो हम सर्वसाधारण के जीवन-स्तर को उस स्तर पर कभी नहीं ला सकते हैं। मैं बड़े-बड़े उद्योगों के विरोध में नहीं हूं, लेकिन मैं यह नहीं चाहता हूं कि सभा बड़े-बड़े पूंजीवादियों की सहानुभूति में अनुरक्त हो जाये कि वे (पूंजीवादी) भारत की आर्थिक उन्नति तथा आर्थिक प्रसार के बाबत सोचते हैं। अब सरकार हमारी है और सरकार के किसी सदस्य ने भी आज के वाद-विवाद में भाग नहीं लिया है। विधान-परिषद् के सदस्य होने के नाते उन्हें हमें यह बताना चाहिये कि उनका रुख क्या है और उनकी विचारधारा क्या है। मैं व्यवस्थापिका के सदस्य होने के नाते नहीं बोल रहा हूं। मैं इस सभा का सदस्य होने के नाते बोल रहा हूं। सरकार में हमारे प्रतिनिधियों का यदि यह

रुख है कि भारतीय जनता का सार्वजनिक हित-साधन उनका कार्य है, तो श्रीमान् जी, उनका यह प्रमुख कर्तव्य है कि संघ-अधिकार-समिति की इस रिपोर्ट को—इस रिपोर्ट की आन्तरिक भावना को नष्ट कर दिया जाये। संघ-विधान इस प्रकार का बनाना चाहिये जिससे कि भारत के आय-साधन की, भारत की बुद्धिमत्ता की, भारत के सर्वोत्तम आर्थिक सुव्यवस्था संबंधी विचारों की भारतीय जनता के प्रगति पूर्ण लाभ के लिये उन्नति करनी चाहिये। इस भावना को मैंने नहीं पाया और मुझे खेद है कि यद्यपि कमेटी में बड़े-बड़े विशेषज्ञ थे, आर्थिक व्यवस्था में उच्च योग्यता प्राप्त तथा कानून के धुरंधर विद्वान् थे परन्तु उन्होंने इस ओर अपने विचार नहीं दिये। मुझे आशा है कि आज के वाद-विवाद के पश्चात् या तो संघ-अधिकार-समिति की रिपोर्ट फिर कमेटी को वापस की जाती है या जब कि संघ-विधान बिल का मसविदा तैयार हो जायेगा और हमारे सामने आयेगा तब वे इस कर्तव्य की भावना को लाखों मनुष्यों में उन्नत करेंगे।

श्री रामनारायण सिंह (बिहार: जनरल): सभापति जी, जो रिपोर्ट अभी उपस्थित की गयी है उस पर विचार हो, इस प्रस्ताव का मैं समर्थन करता हूं। मुझे जो कहने की कुछ जरूरत पड़ गयी वह यूं कि यहां कुछ ऐसी बहस छिड़ गयी है कि इस सरकार को कितने अधिकार दिये जायें। अधिकारों का बंटवारा शुरू हो गया है और हम लोगों को इस संबंध में बहुत विचार करना चाहिये। जहां तक मेरा ख्याल है वह यह है कि किसी सरकार को जितने कम अधिकार दिये जायें, उतना ही अच्छा होता है। साहब, सारी जिन्दगी सरकार से लड़ने में ही बीती। एक सरकार को खत्म किया और दूसरी सरकार हम लोग कायम कर रहे हैं और अभी तक जो राज्य अथवा सरकार रही है उनके प्रति दिल में अच्छा भाव पैदा नहीं हो रहा है। सीधी बात यह है। बात होती है कि केन्द्रीय सरकार और सूबे की सरकार के कितने अधिकार हों। हमारी इच्छा होती है कि सबसे पहले ग्राम में सरकार होनी चाहिये थी। सबसे अधिक अधिकार ग्राम सरकार को मिलने चाहियें थे, उससे कम सूबे की सरकार को और उससे भी कम केन्द्रीय सरकार को। मगर दुर्भाग्यवश अभी ग्राम-सरकार लापता है। लेकिन जो सूबे व प्रान्त की सरकार बन रही है, इस पर जनता का जितना अधिकार है केन्द्रीय सरकार पर उससे कम है। सरकार को कितना अधिकार हो, इसकी चिन्ता सबको होनी चाहिये। लेकिन उसके साथ-साथ यह भी चिन्ता होनी चाहिये कि सरकार पर जनता का कितना अधिकार रहे। हमें सबसे अधिक इसी विषय पर सोचना है। केन्द्रीय सरकार को सारे देश की रक्षा का अधिकार मिलता है। सारे देश में शान्ति रखना और रक्षा करना, क्या यह कम अधिकार है? यह कम अधिकार नहीं है और यही एक अधिकार इस सरकार के लिये काफी था। उसके साथ-साथ सारे देश

[श्री रामनारायण सिंह]

में आमदरफ्त का अधिकार भी देश की सरकार को है। यह भी कम नहीं है। और अब उसके साथ-साथ सारे विदेशियों से जो संबंध हैं उसमें भी इस सरकार को अधिकार है। यह भी कम अधिकार नहीं है। बात यह है कि लोग व्यग्र हैं कि केन्द्रीय सरकार को अधिक मजबूत किया जाये। मैं भी यही चाहता हूं और जो सबको चाहना चाहिये कि सरकार मजबूत हो और भली भी हो। जब तक भली सरकार नहीं होगी तब तक मजबूत सरकार होने से हमारी बुराई ही होगी, भलाई नहीं हो सकती। मैं आपसे कहता हूं कि केन्द्रीय सरकार कभी-कभी ऐसी हो जाया करती है कि वह कहने लगे कि अब राजधानी दिल्ली में न होकर मद्रास में हो जाये। ऐसी केन्द्रीय सरकार हो सकती है। कोई सरकार भली व ईमानदार हो, तो उससे बड़े-बड़े काम हो सकते हैं, लेकिन तनिक भी गड़बड़ हो जाने से सारा गुड़ गोबर हो जाता है। नजीर के तौर पर मैं कहूं कि केन्द्रीय सरकार क्या गड़बड़ी करती है। एक जमाना था बिहार पूसा के लिये अच्छी जगह समझा गया कि वहां पर भारत सरकार का पूसा कालिज हो और जितने खेती के विषय में विशेष जानकारी रखते हैं वे जानते होंगे कि पूसा कालिज जितनी खूबी और नफे के साथ बिहार में चलाया जा सकता था, उतना दिल्ली में नहीं चल सकता। एक जमाने में पूसा कालिज बिहार में सरकार ने स्थापित कराया था, दूसरी भारत की केन्द्रीय सरकार बनी, उसने पूसा कालिज वहां से उठाकर यहां दिल्ली में बना दिया। यही काम केन्द्रीय सरकार के होते हैं, इसको आपको ध्यान में रखना चाहिये। आप जानते हैं कि इसमें कितना खर्चा है और कितनी परेशानी है जिसका कोई हिसाब-किताब नहीं। यह जानी हुई बात है कि एक सूबे की जो आवश्यकता है, दूसरे सूबे से भिन्न रहती है। मैं जानता हूं कि केन्द्रीय सरकार को फूड राशनिंग व फूड डिपार्टमेंट पर अधिकार है, लेकिन हालत क्या है? यू॰पी॰ और पंजाब के लोगों को चावल नहीं चाहिये, उनको गेहूं चाहिये और मद्रास के लोगों को गेहूं नहीं बल्कि चावल चाहिये। केन्द्रीय सरकार मद्रास के लोगों से कहती है कि तुम्हें चावल ही नहीं, गेहूं भी खाना पड़ेगा और पंजाब और यू॰पी॰ के लोगों से कहती है कि नहीं तुम्हें चावल खाना ही पड़ेगा। यह काम है केन्द्रीय सरकार का। केन्द्रीय सरकार को खूब मजबूत बनाइये, मैं भी मानता हूं और मैं भी यही चाहता हूं। केन्द्रीय सरकार जितनी मजबूत होगी, भला ही होगा, लेकिन उसके साथ-साथ सूबे के अधिकारों को कम नहीं करना चाहिये। जो-जो अधिकार यूनियन कमेटी में मिले हैं वह तो है ही और जो आप लोगों की राय होगी, वह तो होगा ही। लेकिन मेरी अपनी राय है कि सूबों में जो रेजीडुअल पावर्स

बंटी हुई हैं, वह सूबों में ही रहनी चाहिये। एक सूबे की आवश्यकता दूसरे सूबे की आवश्यकता से बहुत भिन्न है जिसके बारे में मुझे ज्यादा कहने की जरूरत नहीं है। यह कि इस पर आप ज्यादा गौर न कीजिये। पहले पाकिस्तान न होने की वजह से हमने मान लिया था, लेकिन अब उसकी जरूरत नहीं है इस वास्ते दूसरी बात मान ली, यह ठीक नहीं है। किसको अधिकार देने से हमारी जनता को कितना नफा होगा, इस बात पर विचार करना चाहिये। रेजीडुअल पावर्स सूबों को होनी चाहिये। अगर आप कांकरेण्ट लिस्ट मे रख दें तो कुछ काम चल सकता है। इस वास्ते मैं अपील करूंगा कि इस बात पर खूब सोचा जाये। केन्द्रीय सरकार खूब मजबूत हो, सब कोई चाहता है, लेकिन मजबूत होने के साथ-साथ कोई ऐसा काम उनके मत्थे न होना चाहिये जो सारे देश का हाल न जाने जिससे कि किसी सूबे का नुकसान ही हो। रिपोर्ट में मुझे कुछ बातें खटकती हैं। मैं स्वतंत्र देश का रहने वाला हूं, मुझे राजाओं से कोई मुहब्बत नहीं, लेकिन जैसा रिपोर्ट से मालूम हो रहा है उससे देशी नरेशों को कुछ आशंका हो रही है कि उनके अधिकार कुछ कम किये जा रहे हैं। यह आशंका उनके दिल में पैदा नहीं होनी चाहिये। ऐसी कार्यवाही यहां से होनी चाहिये। आशंका बनी रहने से असंतोष होगा और ठीक से काम नहीं चलेगा। हमें यह देखना है कि देशी नरेश हमारे साथ रहें और जो-जो काम करें सारे प्रजा के हित के काम करें। जो प्रजा के हित का काम नहीं करेगा उनको हटा देने का भी अधिकार हम लोगों को है। लेकिन जितने अधिकार उनको अंग्रेजी राज्य में मिले हुये हैं और उचित हैं, उन अधिकारों को कम करने की चेष्टा हमारे दिलों में नहीं होनी चाहिये। ऐसी चेष्टा करने में हमारी ही बुराई है। यह हमें विचार करना है। यह रेजीडुअल पावर्स उनके दिलों में भी पैदा हो सकती है। इस वास्ते मैं चाहता हूं कि इस अधिकार के बारे में जहां तक हो रेजीडुअल पावर्स सूबों को दी जानी चाहिये।

पं. हीरालाल शास्त्री (जयपुर): आज जो रिपोर्ट हमारे सामने उपस्थित है उसके सिद्धान्तों के समर्थन में मैं दो शब्द कहना चाहता हूं। मुझे इस बहस में नहीं पड़ना है कि केन्द्रीय सरकार के अधिकार बहुत होने चाहियें या कम होने चाहियें। दोनों तरफ की बातें कही जा रही हैं लेकिन मैं स्वयं इस बात को मानने वाला हूं कि केन्द्रीय सरकार के पास काफी अधिकार होने चाहियें। मैं इस रिपोर्ट का समर्थन इसलिए करना चाहता हूं कि इसमें केन्द्र के अधिकारों और प्रान्तीय इकाइयों के अधिकारों का सुन्दर समन्वय किया गया है। देश में शान्ति कायम रखने के लिये और दूसरे कारणों से भी केन्द्र को मजबूत होना चाहिये। लेकिन हमारा देश इतना बड़ा है कि यहां पर प्रान्तीय इकाइयों के पास भी काफी

[पं. हीरालाल शास्त्री]

अधिकार छोड़ने पड़ेंगे। मुझे आज खास तौर से यह अर्ज करना है कि प्रान्तीय इकाइयों में एक तो हमारे प्रान्त हैं और दूसरे देशी रियासतें हैं। कल हुसैन इमाम साहब ने कुछ कठोर शब्दों का प्रयोग किया और इस बात पर आग्रह किया कि इन दोनों में भेद नहीं होना चाहिये। भेद नहीं होना चाहिये, इस बात को हम मानते हैं और हम चाहते हैं। हम जानते हैं कि आज भेद बहुत है। कई प्रकार के भेद हैं। क्षेत्रफल में भेद है, आबादी में भेद है और आमदनी में भेद है। आजकल देशी रियासतों में जिस प्रकार की शासन-व्यवस्था है उसमें भी भेद है। ये सब भेद हैं और हम इनको जानते हैं और समझते हैं। फिर भी मैं मानता हूं कि जो नीति हमारे लिये नये रियासती विभाग की ओर से बरती जा रही है, वह ठीक है। 16 मई के बयान के उपरान्त इससे अधिक आज की घड़ी में देशी रियासतों को न दबाया जायेगा तो ज्यादा ठीक होगा। जितना वह अपनी इच्छा से आज दे देना चाहती हैं उससे हमको एक प्रकार से संतोष मानना चाहिये। लेकिन मैं साथ में इस बात की ओर भी ध्यान दिलाना चाहता हूं कि देशी रियासतों के अधिकारी यह न समझ लें कि विधान-परिषद् में आ जाने से उनके कर्तव्य की इतिश्री हो गई और भारतीय संघ में ले लिये जाने मात्र से उनकी देशभक्ति की भी समाप्ति हो गई। अगर वह ऐसा मानते हैं तो वह बहुत बड़ी भूल करते हैं। क्योंकि आने वाले युग में यह नामुमकिन है कि भारतवर्ष की एक इकाई में एक प्रकार की शासन व्यवस्था रह जाये और दूसरी इकाई में दूसरी रह जाये। यह अनिवार्य है कि तमाम भारतवर्ष में चाहे वह देशी रियासत हो, चाहे वह प्रान्त हो छोटी जगह हो या बड़ी जगह हों, तमाम देश में एक प्रकार की जनतंत्र के आधार पर बनी हुई शासन-व्यवस्था कायम करनी होगी। इस मामले में हमें इस समय दुख है कि देशी रियासतों की जनता को अभी तक स्वराज्य नहीं मिला है। हम कहते हैं और ऐलान कर दिया गया है कि भारत आजाद हो गया है और सारे देश में खुशियां मनाई जा रही हैं। जरूर भारत आजाद हो गया। इन खुशियों में हम तहेदिल से शामिल हैं। जो आजादी मिली समझी जाती है उस आजादी को प्राप्त करने में, उसको नजदीक लाने में हमने भी अपना कुछ हिस्सा, चाहे वह थोड़ा-सा रहा हो, बटाया है। इसका भी हमें गर्व है। लेकिन यह सब होते हुये भी हमें दुख है कि आज जबकि हिन्दुस्तान को आजादी मिली हुई बताई जाती है तो हमको यह महसूस करना पड़ता है कि देशी रियासतों की जनता को अभी आजादी नहीं मिली है। यह बड़े अफसोस की बात है।

आज तो हम इस बात पर आशा लगाये बैठे हैं कि अब 15 अगस्त निकल गया, नया जमाना आ रहा है, तब्दीलियां हो रही हैं तो देशी रियासतों में भी

तब्दीलियां कैसे न होंगी। देशी रियासतों के जो अधिकारी हैं, राजा हैं या आजकल के मंत्री हैं, उनकी दूरदर्शिता पर हम थोड़ा-बहुत भरोसा रख सकते हैं। वह जरूर समझते होंगे कि जमाने के दबाव के आगे उनको झुकना पड़ेगा। अगर वह न झुकेंगे तो उनको टूट जाना पड़ेगा। इस बात पर भी हमें कुछ भरोसा है। थोड़ा-बहुत भरोसा हमें इस बात पर है कि शायद केन्द्रीय सरकार भी हमारी कुछ मदद करेगी। जो पिछली केन्द्रीय सरकार थी, वह हमारी मदद नहीं करती थी। वह तो उन लोगों की मदद करती थी जो सरकार की मदद करते थे और उसको यहां बनाये रखने में मददगार होने से गर्व अनुभव करते थे। उनकी मदद वह करती थी हमारी मदद नहीं करती थी। हमारी प्रगति में वह बाधा, जितना उससे बनता था, पहुंचाती थी। लेकिन उस सरकार का अन्त हो गया और उस सरकार के अधिकारी भी कहीं छिप गये और वह अब हमारे सामने नहीं हैं। नई सरकार अब आ गई है और इससे हम मदद की आशा भी रखते हैं। मुमकिन है वह मदद न करें, लेकिन हम इतनी आशा जरूर रखते हैं कि वह हमारे काम में बाधा नहीं पहुंचायेगी।

मैंने आपसे अर्ज किया कि मैं मजबूत केन्द्रीय सरकार का समर्थन करता हूं। और मैं यह भी कहता हूं कि इस समय रियासतें अगर थोड़ी चीजों के साथ शामिल होती हैं तो उन्हें हो जाने दीजिये। यह कहने के साथ-साथ मैं यह बता देना चाहता हूं कि आखिरकार हम भरोसा करते हैं, तो कुछ समझ कर ही भरोसा करते हैं। केवल देशी रियासतों को दूरदर्शिता के भरोसे पर नहीं, केन्द्रीय सरकार की मदद के भरोसे पर नहीं, बल्कि हम अपने भीतर कोई शक्ति पाते हैं, अपने भुजबल में कोई चीज देखते हैं, उसके भरोसे पर मैं यह बात कहना चाहता हूं। क्योंकि देशी राजा चाहें या न चाहें, केन्द्रीय सरकार वचनबद्ध होने से वहां दखल दे सके या न दे सके, देने की इच्छा रखे या न रखे, और कोई बात हो या न हो, लेकिन हम जानते हैं कि जनतंत्रीय सरकार स्थापित करने के लिये हम अपने यहां कुछ उठा नहीं रखने वाले हैं। जो हम कर सकते हैं वह जरूर करने वाले हैं। जनता की शक्ति इतनी बढ़ेगी कि फिर उसके सामने राजा, महाराजा या उनके मददगार कोई भी नहीं ठहर सकते। इसलिये वर्तमान शासन-व्यवस्था वहां भी जरूर कायम रहने वाली नहीं है। इसलिये हमें अधीर नहीं होना चाहिये। कुछ कड़ी बातें कह कर हम देशी रियासतों को न बेचैन करना चाहते हैं, न परेशान करना चाहते हैं और न डराना चाहते हैं। आज उनकी देशभक्ति कुछ उभड़ी हुई मालूम होती है और इस देशभक्ति के आधार पर वे आ रहे हैं। वे आ रहे हैं तो उन सबको आ जाने दीजिये। लेकिन आने के बाद इतिश्री न हो जायेगी; वहां

[पं. हीरालाल शास्त्री]

भी परिवर्तन करना पड़ेगा। इतना कहने के बाद मैं इस बात का समर्थन करना चाहता हूं कि केन्द्रीय सरकार को हर सूरत में मजबूत बनाना चाहिये। अगर कमजोर सरकार रहेगी तो देश में शान्ति कायम न रह सकेगी। देश में शान्ति रखना सबसे पहला काम है। उसके बाद मौका आयेगा नई सामाजिक रचना करने का, नई आर्थिक रचना करने का। वह मौका आयेगा और ये सब काम पूरे होंगे। इसलिये केन्द्रीय सरकार को मजबूत होना चाहिये। प्रान्तीय सरकार के पास भी पर्याप्त अधिकार होने चाहियें। मैं यह भी बता दूं कि देशी रियासतों के साथ एक झगड़ा और है। देशी रियासतें एक समान नहीं हैं। कोई बड़ी है और कोई छोटी है। उनके समूह बनाने पड़ेगे ताकि वे नये भारत में एक ठीक पैमाने की इकाइयां हो जायें।

यहां जितनी बातें केन्द्रीय सरकार को मजबूत बनाने के लिये कही गई हैं उनका कोई खास असर मुझ पर नहीं पड़ता है। मैं मजबूत सरकार बनाने का समर्थन करता हूं।

***श्री देवीप्रसाद खेतान** (पश्चिमी बंगाल: जनरल): अध्यक्ष महोदय, जितने भी वाद-विवाद इस सभा में हुये हैं उनमें आज के प्रश्न पर जो वाद-विवाद चल रहा है वह देश की वास्तविक आवश्यकता के ज्ञान पर उतना निर्भर नहीं है जितना कि अलंकारात्मक प्रभावशाली भाषा पर निर्भर है। श्रीमान् जी, विशेषकर अन्तर्राष्ट्रीय ख्यातिप्राप्त सर रामास्वामी मुदालियर ने जो प्रभावशाली वक्तव्य दिया है उसके लिये मैं यह कह सकता हूं। उन्होंने अपनी अलंकारात्मक भाषा के सौंदर्य में अपने तर्क की निर्बलता तथा खोखलेपन को ढक लिया है। उस समय वे देश की रक्षा के लिये आवश्यकताओं तथा युद्ध करने के लिये चाहे वह रक्षात्मक हो या विध्वंसात्मक, जो सामान जरूरी हो जाता है उसे वे भूल गये। वे सरलतापूर्वक इस बात को भूल गये कि युद्धकाल में किस प्रकार समस्त देश में सेनायें खड़ी की जाती हैं, जिसके चिन्ह संसार में दृष्टिगोचर हो रहे हैं और जिसका शिकार हमारा अभागा देश, जो कि पूर्णत: उन्नत नहीं है, किसी भी निकट तिथि में बन सकता है। इस प्रकार कहकर मैं किसी संकट की भविष्यवाणी नहीं कर रहा हूं, लेकिन मैं विश्वास करता हूं कि चाहे अपनी स्वतंत्रता की रक्षा करने के लिये हो, चाहे शिक्षा तथा सुन्दर स्वास्थ्य के प्रसार करने के लिये हो, या चाहे अधिक उत्पादन करने के लिये हो, यह आवश्यक है कि समस्त भारत को एक मानना चाहिये और हममें से प्रत्येक को, चाहे वह प्रान्तीय शक्ति में विश्वास करता हो चाहे राष्ट्रीय शक्ति में, यह देखना चाहिये कि आन्तरिक सुरक्षा तथा शान्ति और बाहरी हमलों

से रक्षा की जाये तथा कृषि और उद्योग संबंधी उत्पादनों की वृद्धि हो। क्योंकि राष्ट्रीय सम्पत्ति की वृद्धि द्वारा ही हम राष्ट्रीय निर्माण कार्य में उन्नति कर सकते हैं जिस पर सर रामास्वामी मुदालियर ने इतना प्रभावशाली वक्तव्य दिया।

उन्होंने प्रान्तीय सूची में दिये हुये मदों का विश्लेषण किया और अनेक मदों पर उन्होंने ताना मारा। सबसे पहला मद जिसको उन्होंने लिया मालगुजारी का था और प्रान्तों द्वारा भूमि संबंधी हितों की प्राप्ति की याद सभा को दिलाई। परन्तु क्या सबसे अधिक शक्तिशाली तर्क का इस प्रस्ताव के पक्ष में प्रयोग नहीं किया गया जब यह कहा गया था कि वे मध्यवर्ती पट्टेदार हैं जो कि समस्त आय को ले जाते हैं और प्रान्तीय सरकार को वह आय नहीं मिलती? क्या यह आशा नहीं की जाती है कि मध्यवर्ती पट्टेदारों को समाप्त करने या खरीद लेने पर वर्तमान मालगुजारी की प्रथा के अंतर्गत प्रान्तीय सरकारों को जितना अब फायदा होता है उससे अधिक फायदा होगा।

दूसरे, उन्होंने मद 42 कृषि द्वारा आय पर कर की हंसी उड़ाई। प्रान्तों ने सदैव यही सोचा कि वे कर-निर्धारण की इसी पद्धति को अपनायेंगे और जब तक मध्यवर्ती पट्टेदार रहते हैं तब तक किंचित मात्र भी आशा नहीं की जा सकती कि प्रान्त इसे एक अच्छी आय का साधन बना सके।

इसके बाद उन्होंने ''चूल्हे और खिड़की'' शब्दों का मजाक उड़ाया, परन्तु उनके पूर्व आने वाले शब्दों, अर्थात् ''भूमि तथा इमारतों पर कर'' को सरलता से भूल गये। यह कौन अस्वीकार कर सकता है कि भूमि तथा इमारतों पर कर केवल प्रान्तीय सरकार के लिये ही नहीं वरन् म्यूनिस्पैलिटी के लिये भी शिक्षा में उन्नति करने, अच्छे मकान बनवाने तथा अन्य लाभदायक कामों को प्रोत्साहन देने के लिये, जिनकी प्रान्त निवासियों को आवश्यकता है, एक अच्छी आय का साधन है।

कृषि योग्य भूमि के उत्तराधिकार सम्बन्धी कर, एक दूसरा मद है जिसके बाबत सर रामास्वामी मुदालियर ने आसानी से यह कह दिया कि प्रान्तों के लिये यह लाभदायक नहीं है। परन्तु प्रान्तों ने सदैव यह सोचा कि कृषि योग्य भूमि पर उत्तराधिकार के संबंध में सम्पत्ति-कर की अवहेलना की गई, जिनको वे बिल्कुल ही भूल गये और जो कि आय का लाभदायक साधन होगा।

खनिज सम्पत्ति पर कर—पहले चाहे यह कितना ही तुच्छ रहा हो परन्तु जबकि हमारे खनिज साधनों की उन्नति की जाती है तो अनेकों प्रान्तों के लिये यह आय

[श्री देवीप्रसाद खेतान]

का लाभदायक साधन होगा तथा समस्त देश को एक बड़ी शक्ति प्रदान करने के ये साधन होंगे।

श्रीमान् जी, प्रान्तीय सूची के प्रत्येक मद को लेकर मैं सभा का समय गंवाना नहीं चाहता हूं।

मैं सभा का ध्यान सूची 1 अर्थात् केन्द्रीय सूची में दिये गये मदों की ओर आकर्षित करना चाहता हूं। यह मालूम करने के लिये हम इन मदों का विश्लेषण करें कि यदि इन करों को प्रांतीय दायरे में रख दिया जाये तो शासन-प्रबन्ध द्वारा इन करों का उगाहना संभव होगा अथवा यदि इनको प्रान्तों के अधिकार में दे दिया जाये तो क्या देश के आर्थिक साधनों को उन्नत करने की आवश्यकता पूरी की जा सकेगी। केन्द्रीय कर-निर्धारण सूची 1 में मद 77 से प्रारम्भ होते हैं। कृषि संबंधी आय के अतिरिक्त अन्य आयों पर कर। यह भली प्रकार विदित है कि एक ही व्यक्ति, फर्म या कम्पनी के नाम से विभिन्न प्रांतों में व्यापार चल रहे हैं। कभी-कभी ऐसा भी होता है कि किसी कम्पनी का मुख्य कार्यालय तो एक प्रांत में है और माल तैयार करने का कारखाना दूसरे प्रांत में। ये समस्त कठिनाइयां तथा समानता की आवश्यकता के कारण यह बहुत जरूरी है कि आय पर कर निर्धारित करना और उसको उगाहना केवल केन्द्र द्वारा ही किया जा सकता है। श्रीमान् जी, मैं आशा करता हूं कि यहां ऐसा कोई भी नहीं है कि जो यह कहे कि आयकर या कारपोरेशन कर जो मद 73 में है प्रांतों को दे दिये जायें। यदि आप ऐसा करेंगे तो विभिन्न प्रांतों में होड़ होगी जैसी कि अमेरिका के कुछ प्रदेशों में हुई। प्रदेशों में करों को भिन्न-भिन्न दर से लगाया गया, कुछ प्रदेशों में व्यापार को प्रलोभन देने के लिये तथा अन्य प्रदेशों में उस व्यापार की उन्नति रोकने के लिये यहां तक कि समुन्नित प्रदेशों में कुछ व्यावसायिक केन्द्रों तथा अन्य आय के साधनों से अनुचित तथा अधिक आमदनी करने के लिये। अतः यह बहुत वांछनीय है कि आय तथा कारपोरेशन करों को केन्द्र के सुपुर्द करना चाहिये। विगत काल में इस कर की आय का प्रांतों में बंटवारा किया जाता था और मुझे इसमें किंचित-मात्र भी शंका नहीं है कि वह सही था। रिपोर्ट के छठे पैरे में अन्तिम वाक्य—जिसका भी सर रामास्वामी मुदालियर ने मजाक उड़ाया—बताता है कि कुछ करों की आय का समय-समय पर संघ द्वारा निर्धारित आधार पर समर्पण या बंटवारे की व्यवस्था बना देनी चाहिये। ''समय-समय पर'' ही विशेष शब्द हैं जिनका सर रामास्वामी ने मजाक उड़ाया। लेकिन मैं कहूंगा कि समय-समय पर यह होना चाहिये। समयानुसार विभिन्न प्रांतों की विभिन्न आवश्यकतायें होती हैं और परिस्थितियों के

अनुसार केन्द्रीय सरकार को यह देखना होगा कि प्रांतीय सरकार किसी कठिनाई में तो नहीं पड़ जायेगी। क्या मैं हाउस को उन दु:खजनक परिस्थितियों की याद दिलाऊं जिनमें सन् 1943 ई० में बंगाल था? यदि इस प्रकार की व्यवस्था न होती कि करों की आय का प्रांतों की आवश्यकता के अनुसार समय-समय पर बंटवारा किया जा सकता है तो न मालूम बंगाल की क्या दशा होती, यदि केन्द्रीय सरकार उस प्रांत की सहायता करने के लिये सन् 1943 में और उसके बाद अग्रसर न होती। उत्तरी भारत में आजकल हम अकाल के किनारे खड़े हैं। कौन यह कल्पना कर सकता है, किसमें यह कल्पना करने का साहस है कि वह यह कहे कि निकट भविष्य में उत्तरी भारत की आवश्यकतायें अन्य प्रांतों की आवश्यकताओं से अधिक महान नहीं हैं? अत: श्रीमान् जी, समय-समय पर विभिन्न प्रांतों की तथा विभिन्न प्रदेशों की आवश्यकताओं पर निश्चय करने के आशय से केन्द्र को कुछ गुंजाइश देनी चाहिये। कुछ ऐसे प्रांत हैं जो अन्य प्रांतों से उद्योगों में अधिक उन्नत हैं और हमारे लिये यह आवश्यक है कि जहां तक हो सके उन प्रांतों को जो कि बहुत पिछड़े हुये हैं अधिक उन्नत प्रांतों के स्तर पर लायें। भविष्य में उनकी मांग अनुपात से अधिक होगी। केवल उद्योग तथा कृषि संबंधी उन्नति के लिये ही नहीं, वरन् स्वास्थ्य सुधार, शिक्षा तथा अन्य राष्ट्र निर्माण कार्यों के लिये भी जिन पर सर रामास्वामी मुदालियर ने जोर दिया है। रिपोर्ट के निर्माताओं की समालोचना करने से कोई लाभ नहीं जिन्होंने कि रिपोर्ट में प्रकाशित प्रत्येक शब्द पर उचित ध्यान दिया है और फिर उस पर हम उचित ध्यान दिये बिना हंसें जब कि हम ध्यान देने में समर्थ हैं, और उस बुद्धि का प्रयोग न करें जिसका सर रामास्वामी जैसे मनुष्य अपने अंतर्राष्ट्रीय अनुभव के सहित तथा एक दीर्घकाल तक भारत सरकार की प्रबन्धकारिणी परिषद् की सदस्यता के अनुभव के सहित प्रयोग कर सकते हैं। उन्होंने नासिक यंत्रालय का केन्द्र की आय के लिये एक लाभदायक साधन के रूप में जिक्र किया है। उस समय सर रामास्वामी मुदालियर भारत में पौंड पावना (Sterling Balance) का जोरदार समर्थन करते थे और यह समझाते थे हमारे देश के लिये यह मूल्यवान सम्पत्ति है। आज वही सर रामास्वामी मुदालियर जब कि हमारी मुद्रा हटाने के संबंध में बात करते हैं तो वे सरलता से पौंड पावने के अस्तित्व को भूल जाते हैं जिसके लाभों की वे बड़ी जोरों से घोषणा किया करते थे और इंग्लैंड को हमारे देश का माल इतने सस्ते भाव में बेचा करते थे, जितना सस्ता इंग्लैंड को अन्य स्थानों से नहीं मिलता था, यहां तक कि नियंत्रित मूल्य से भी कम दामों में तथा अन्य साधनों द्वारा। यह केवल सस्ते भाव के ही कारण था कि हमारा पौंड पावना बना। अब वे हमारा ध्यान नासिक यंत्रालय की ओर आकर्षित करने का प्रयत्न करते हैं और यह भी कहते

[श्री देवीप्रसाद खेतान]

जाते हैं कि वे महंगाई के पक्ष में नहीं हैं। देश की आर्थिक स्थिति बड़ी नाजुक है। क्या वे यह जानते हैं कि हमारे देश की आर्थिक स्थिति इस समय क्या है? पहले भारत सरकार अर्थ हेतु बाजार में जा सकती थी और प्रतिवर्ष 100 से लेकर 150 करोड़ तक रुपया कर्ज ले लिया करती थी, लेकिन आज वस्तुस्थिति क्या है? रिजर्व बैंक को सरकारी जमानतों का मूल्य कायम रखने के लिये सदैव बाजार में रहना पड़ता है और सरकारी जामिनगीरी (Government Securities) खरीदनी पड़ती है, अलावा इसके कि वह कर्ज लेने के आशय से बाजार जाने का साहस करे। हमारे देश के हित के लिये, प्रांतों के हित के लिये भी तथा प्रांत में रहने वाले प्रत्येक व्यक्ति के हित के लिये भी यह आवश्यक है कि हमारी वह केन्द्रीय सरकार, जिसे रक्षा की ओर ध्यान रखना है, जिसे औद्योगिक उन्नति की ओर ध्यान देना है और जिसे आवपाशी, जल द्वारा विद्युत उत्पादन करने के कारखाने तथा अन्य विधियों द्वारा कृषि उद्योग में सहायता करना है, शक्तिशाली हो तथा हम केवल किसी सैद्धांतिक तर्क के आधार पर अपने केन्द्र को अशक्त न बनायें। इसी प्रकार, श्रीमान् जी, आप देखेंगे कि केन्द्रीय विषय सूची में जो कर रखे गये हैं वे केवल ऐसे हैं जिनका केन्द्र द्वारा सुविधापूर्वक प्रबन्ध किया जा सकता है, जो कि विभिन्न प्रांतों में समान रूप से लागू किये जाने के लिये आवश्यक है और जिनकी कृषि संबंधी तथा औद्योगिक उन्नति इत्यादि के लिये नितांत आवश्यकता है। हमें मीलों रेलगाड़ियां चालू करनी हैं, हमें समुद्रीय व्यवसाय उन्नत करना है। हमें इतनी बातों में उन्नति करनी है कि वे केन्द्र द्वारा ही की जा सकती हैं, और जब तक कि इनमें से प्रत्येक मद की यथेष्ट उन्नति न हो तब तक न तो हम स्वतंत्रता का निर्वाह कर सकेंगे और न हमारे लिये यह संभव होगा कि हम शिक्षा, स्वास्थ्य, कृषि अथवा अन्य किसी राष्ट्र निर्माण के कार्य में उन्नति कर सकें जिनकी उन्नति करने के लिये हम सब आतुर हैं। अन्त में श्रीमान् जी, कहां इन करों की आय चली जाती है? केन्द्रीय सरकार समस्त देश का प्रतिनिधित्व प्राप्त किये हुये है, वह उस केन्द्रीय व्यवस्थापिका का उत्तरदायित्व ग्रहण किये हुये हं, जिसमें समस्त प्रांतों के प्रतिनिधि बैठते हैं और यह निर्णय करते हैं कि कर द्वारा प्राप्त आय किस प्रकार खर्च की जाये। क्या वे केन्द्रीय सरकार को देश के सर्वोत्तम हित-साधन में प्रयोग करने के अतिरिक्त कर की आय को नष्ट करने देंगे? वे उसका देश के हित के लिये प्रयोग करेंगे या तो सीधे रूप से या कर की आय को प्रांतों में बांट कर, जिनका कर्तव्य होगा कि वे देश की उन्नति के लिये उसे खर्च करें। अत: मैं अपने माननीय मित्रों से निवेदन करता हूं कि वे केन्द्र तथा प्रांतों के पक्ष विपक्ष के नारे से प्रभावित न हों बल्कि अपने मन में गंभीर चिंतन करें

कि देश के हित के लिये उत्तम बात क्या है। हम अपनी स्वतंत्रता का निर्वाह करें और अपनी रक्षा को दृढ़ बनायें। हम अपने साधनों को कायम रखें, अधिकाधिक व्यापारिक तथा औद्योगिक केन्द्र खोलें जिससे कि हम समस्त देश में समुचित धनराशि बढ़ा सकें। केवल देश की समुचित धनराशि की नींव पर ही हम शिक्षा, स्वास्थ्य, संस्कृति, कला तथा अन्य उन साधनों का, जो प्रत्येक व्यक्ति के जीवन को सुसम्पन्न, सुन्दर तथा सुखी बनाने के लिये सहायक होते हैं, भवन निर्माण कर सकते हैं।

***श्री अमिय कुमार दास** (आसाम: जनरल): अध्यक्ष महोदय, इतने शानदार वाद-विवाद के पश्चात् मैं इसमें भाग लेने की इच्छा नहीं रखता था। लेकिन मैंने सोचा कि मैं अपने कर्तव्य का पालन नहीं करूंगा यदि मैं उन कुछ प्रमुख प्रश्नों पर प्रकाश नहीं डालूं जिनमें मेरे प्रांत का हित है। श्रीमान् जी आरम्भ में ही मैं यह स्वीकार कर लूं कि मैं हृदय से इस कमेटी के सदस्यों को इस रिपोर्ट के पेश करने की बधाई नहीं दे सकता हूं। श्रीमान् जी, मैं इससे सहमत हूं कि संघ-विधान में अधिकारों का विभाजन एक प्रमुख प्रश्न है। समस्त विधानों में यही झगड़े की जड़ रही है कि केन्द्र और प्रांतों में किस प्रकार अधिकारों का विभाजन किया जाये। विगत अनेकों वर्षों से भारतीय राजनीति के क्षेत्र में अवशिष्ट अधिकारों का प्रश्न विवादास्पद विषय रहा। एक वर्ग यह मांग करता रहा कि अवशिष्ट अधिकार प्रांतों को सौंप दिये जायें और दूसरा वर्ग यह मांग करता रहा कि वे केन्द्र को सौंप दिये जायें तथा कांग्रेस को इन अवशिष्ट अधिकारों को प्रांतों को सौंपने की स्थिति ग्रहण करनी पड़ी जिससे कि जनता के एक वर्ग को सान्तवना दी जा सके। आज कांग्रेस ने जो विपरीत स्थिति ग्रहण की है, मैं माने लेता हूं कि वह भारत के अत्याज्य परन्तु खेदनीय विभाजन के कारण परिस्थिति की प्रतिक्रिया के द्वारा ही उत्पन्न हुई है। परन्तु मैं उसके तर्क को नहीं समझ सकता हूं, अवशिष्ट अधिकारों को केन्द्र के सौंपने की स्थिति ग्रहण कर लेने के पश्चात् क्यों इस कमेटी के सदस्यों ने रियासतों के प्रति भिन्न रुख लिया है। उस स्थिति को ग्रहण करने के पश्चात् रियासतों तथा प्रांतों के लिये उन्हें एक ही नीति का निर्वाह करना चाहिये। प्रांतों में उन्होंने अधिकार छीन लिये हैं जहां कि जनतंत्रात्मक राज्य है, लेकिन रियासतों में जब कि जनता को शासन-व्यवस्था में कोई अधिकार नहीं है उन्होंने स्वेच्छाचारी शासकों को अधिकार सौंप दिये हैं। मेरे विचार से तो यह जनतंत्रात्मक सिद्धांतों का अस्वीकार करना प्रतीत होता है।

श्रीमान् जी, उस शासन-प्रणाली के वसीयतदार होने के नाते जिसको विगत काल में प्रमाणित नहीं किया गया था कि वह प्रान्तों के साथ आर्थिक व्यवस्था के विषय

[श्री अमिय कुमार दास]

पर ठीक तथा परिपूर्णता के साथ विचार कर सकी थी, लेकिन मैं आज यह अनुभव करता हूं कि केन्द्र को शक्तिशाली बनाने की चिंता में हम पुनः उन्हीं प्रान्तों को खोकर केन्द्र को शक्तिशाली बनाने की नीति को ग्रहण कर रहे हैं। केन्द्र को शक्तिशाली तो हमें बनाना ही चाहिये क्योंकि हमारे सामने वह स्थिति है जो कि एक ओर तो ज्वालामुखी के समान है और दूसरी ओर गत्यात्मक है, परन्तु हमें प्रान्तों को दुर्बल नहीं बनाना चाहिये। यह सब होते हुये भी वे केवल प्रान्त ही हैं जिन्हें कांग्रेस के गत्यात्मक कार्यक्रम को पूरा करना है। आर्थिक व्यवस्था, जो कि केन्द्र को शक्तिशाली बनाने की चिन्ता का परिणाम है, जिसके द्वारा केवल केन्द्र में आर्थिक दृढ़ता आती है तथा जिससे प्रदेशों में राष्ट्र-निर्माण के कार्यक्रम को पूरा करने के लिये धन की कमी रहेगी, आज भी वैसी ही है और मैं उसमें कोई अन्तर नहीं देखता हूं। प्रान्तों को खोकर केन्द्र को शक्तिशाली बनाने की नीति आज भी सुन्दर प्रतीत होती है।

श्रीमान् जी, मैं जानता हूं कि अपने प्रान्त की कोई खास वकालत करने का यह अवसर नहीं है, लेकिन मैं समझता हूं कि मैं अपने कर्तव्य का पालन नहीं करूंगा यदि मैं अपने देश की आर्थिक अवस्था के संबंध में कुछ बातों पर प्रकाश न डालूं। मेरा प्रान्त आसाम, चाय और पेट्रोल के देशी माल पर कर तथा निर्यात-कर के रूप में केन्द्रीय खजाने के लिये आठ करोड़ वार्षिक आय का साधन रहा है। परन्तु आसाम को जो आर्थिक सहायता मिली वह केवल 30 लाख रुपये थी, इसमें मैं आज भी कोई परिवर्तन नहीं देखता हूं। मैं अनुभव करता हूं तथा श्रीमान् जी, मुझे यह कहने में खेद है कि हमारे नेता अभी भारतीय सरकार के एक्ट के प्रभाव से दूर रहने में समर्थ नहीं हो सके। श्रीमान् जी, कांग्रेस मंत्रिमंडल के पदारूढ़ होने पर केवल प्रान्तों में ही नहीं वरन् केन्द्र में भी लोग क्रान्तिकारी परिवर्तन की आशा कर रहे हैं और ऐसी आशा करना अन्यायपूर्ण नहीं है। हमें अपनी शासन-व्यवस्था को दफ्तर के रस्मी गोरखधंधे के जंजाल से मुक्त कर देना चाहिये और हमें अपने कार्यक्रम को शीघ्रता के साथ पूरा करने की योजना बनानी चाहिये।

अन्त में समाप्त करने के पूर्व मुझे इस सभा के समक्ष एक और बात, जिसमें कि मेरे प्रान्त का हित है, लाना चाहिये। संघ-विषय-सूची में जो विषय दिये गये हैं उनमें मैं स्थानान्तर गमन तथा नागरिककरण को पाता हूं। मेरे मन में यह आता है कि इन दोनों विषयों को भी सहगामी सूची में रख दिया जाये या भाषा में इस प्रकार परिवर्तन कर दिया जाये कि प्रांत इन विषयों को अपने कार्य क्षेत्र के

अंतर्गत ला सकें। श्रीमान् जी, मैं नहीं जानता कि अन्य प्रांतों की क्या दशा है, हमारे लिये तो यह बहुत दु:खदायी है। हम जानते हैं कि किस प्रकार जनसमूह के आसाम में आ जाने से आबादी की आकृति ही बदल गई है। साम्प्रदायिक निर्णय तथा साम्प्रदायिक प्रतिनिधित्व के साथ-साथ हमारे लिये यह उचित नहीं था कि हम एक विशाल रूप में जनसमूह का स्थानान्तर करें और यहां तक कि खाली कराने पर भी—जो कि हमारे प्रान्त में हो रहा है—मैं प्रान्त में ऐसे बहुत से मनुष्य पाता हूं जो प्रान्त के नहीं हैं बल्कि सरकारी भूमि में प्रवेश करने की अनधिकार चेष्टा करने वाले हैं और अब भी अपने रिश्तेदारों के साथ रहकर प्रान्त पर निर्भर हैं। इस वातावरण में श्रीमान् जी, मैं चाहता हूं कि कमेटी के सदस्य और विशेषकर इस प्रस्ताव के प्रेषक इस प्रश्न पर और अधिक समझदारी के साथ विचार करें और इस विषय में प्रान्तों को कुछ अधिकार दें। यदि आसाम जो कि आसामियों की मातृभूमि है और यदि उनकी रक्षा नहीं की जा सकती तो अपने लिये तो मैं यह कहूंगा कि मुझे इस सभा में आने का कोई न्यायपूर्ण अधिकार नहीं है। आसामियों की संस्कृति अन्य प्रान्तों से भिन्न है। आसामियों की भाषा पृथक है और जिसका यद्यपि मूल रूप संस्कृत ही है पर उस पर तिब्बत तथा बर्मा की भाषा का प्रभाव है। हमें आसामियों की रक्षा करनी चाहिये। इस विषय पर इन विचारों के द्वारा मैं इस प्रस्ताव के प्रेषक से निवेदन करता हूं कि वे प्रान्तों द्वारा कार्यवाही किये जाने की व्यवस्था करें। श्रीमान् जी, इन शब्दों के साथ-साथ मैं श्री आयंगर द्वारा पेश किये गये प्रस्ताव का समर्थन करता हूं।

***सर बी॰एल॰ मित्तर** (बड़ोदा): अध्यक्ष महोदय, मैं कुछ शब्द कहने में अधिक समय लेना नहीं चाहता हूं। मुझे वे शब्द इसलिये कहने पड़े कि उनके अंतर्गत विचारों को अभी तक वाद-विवाद में नहीं लाया गया। यह मान लिया गया है कि इस रिपोर्ट में अधिकारों का विभाजन स्वेच्छाचारिता से किया गया है, कुछ सोचते हैं कि आवश्यकता से अधिक अधिकार केन्द्र को दे दिये गये हैं, कुछ सोचते हैं कि प्रान्तों को दुर्बल बना दिया गया है, इत्यादि, इत्यादि। मैं कमेटी का सदस्य था। अधिकारों के विभाजन के विषय पर कमेटी ने एक निश्चित सिद्धान्त का पालन किया, जो यह है—राष्ट्रीय विषय केन्द्र को सौंपे जाने चाहियें तथा प्रान्तीय विषय प्रान्तों को। जबकि हमने इन सूचियों को बनाया, हमारे मन में यही मौलिक सिद्धान्त थे। हमने देखा कि सन् 1935 ई॰ का एक्ट एक अच्छा पथ-प्रदर्शक था क्योंकि सन् 1935 ई॰ के एक्ट की सूचियों को बनाने में इसी सिद्धान्त को दृष्टि में रखा गया था। मैं माननीय सदस्यों से निवेदन करूंगा कि जब हम विभिन्न

[सर बी.एल. मित्तर]

मदों पर वाद-विवाद करें, वे कृपया इस मौलिक सिद्धान्त को ध्यान में रखें कि राष्ट्रीय हित के विषय केन्द्र के अंतर्गत रहने चाहियें तथा प्रान्तीय हित के विषय प्रान्त के अंतर्गत रहने चाहियें। ऐसे कुछ विषय हैं जिनके लिये सहगामी सूची होनी चाहिये, जिस पर कि दोनों प्रान्तों तथा केन्द्र के अधिकार होने चाहियें। मेरा दूसरा विषय रियासतों के संबंध में है। कुछ सदस्यों ने प्रश्न किया है कि रियासतों की प्रान्तों से कुछ भिन्न स्थिति क्यों होनी चाहिये? कारण स्पष्ट है। भारत लगभग आधा-आधा है—आधा ब्रिटिश भारत तथा आधा रियासत के रूप में। हम रियासतों को संघ में रहने देना चाहते हैं या नहीं? मैं समझता हूं कि इस बात पर तो यहां कोई झगड़ा नहीं होगा कि हम रियासतों को भारत में आने देना चाहते हैं, उन सूबों को जो कि भारत कहे जाने वाले देश की सीमा के अंतर्गत हैं। रियासतों ने 16 मई की घोषणा के आधार पर सम्मिलित होना स्वीकार किया है। अतः यदि आप रियासतों को आने देना चाहते हैं और एक दृढ़ शक्तिशाली भारत बनाना चाहते हैं तो आपको उन शर्तों को स्वीकार करना पड़ेगा, जिनके आधार पर वे आये हैं। इसी कारण रियासतों के लिये कुछ विशेष व्यवस्था बनानी पड़ी। एक बार रियासत सम्मिलित हो गई तो इसमें संदेह नहीं कि शनैः शनैः रियासतें और प्रान्त एक दूसरे के सन्निकट आ जायेंगे। रियासतें उन्नति करेंगी। मान लीजिये कि रियासतें पिछड़ी हुई हैं तो पिछड़े हुये भागों के लिये आपको कुछ अनुग्रह प्रदर्शन करना होगा। उनको आने दीजिये, उनको अपने साथ सम्पर्क बढ़ाने दीजिये और फिर आप देखेंगे कि शनैः शनैः वे एक ही दर्जे के निकट आ जायेंगे। यही हमारा उद्देश्य है और इस प्रकार भारत एक दृढ़ शक्तिशाली देश हो जायेगा। मैं प्रान्तों के सदस्यों से निवेदन करूंगा कि वे रियासतों के साथ जो पक्षपात किया है, उसको ध्यान में न लायें।

***अध्यक्षः** मेरे ख्याल से अब हमने यथेष्ट वाद-विवाद कर लिया है और यदि प्रस्ताव स्वीकार कर भी लिया जाये तो उसका केवल यही मतलब होगा कि रिपोर्ट पर विचार किया जाये तथा रिपोर्ट का विवरण वाद-विवाद के लिये प्रस्तुत होगा। इसलिये यदि सभा मुझे आज्ञा देती है तो मैं इस प्रस्ताव पर प्रस्तावक महोदय को, यदि वे चाहते हैं, तो उत्तर देने का अवसर देने के पश्चात् वोट लूं।

***माननीय श्री एन० गोपालस्वामी आयंगर** (मद्रासः जनरल): अध्यक्ष महोदय, इतने लम्बे वाद-विवाद के पश्चात् मैं नहीं समझता कि मेरे लिये सभा का

अधिक समय लेना आवश्यक है, विशेषकर जबकि एक या अन्य वक्ता द्वारा किसी विशेष सिद्धान्त पर उपस्थित किये गये तर्क का विरोधी विचार धारण करने वाले सदस्यों द्वारा प्रत्याख्यान किया जा चुका है। मेरे लिये यह अब आवश्यक है कि मैं उन सब विवरणपूर्ण प्रश्नों का उल्लेख करूं जो कि वाद-विवाद में उठाये गये हैं। श्रीमान् जी, मैं एक या दो प्रमुख विचारों का उल्लेख करना चाहता हूं। एक का अभी मेरे मित्र सर बी॰एल॰ मित्तर ने हवाला दिया था कि प्रान्तों तथा रियासतों में इन सूचियों के बनाने में जो भेद-विभेद है। मैंने अपने प्रथम भाषण में इस बात का उल्लेख किया था और मैंने उन विचारों की ओर संकेत किया था, जिनका इस निश्चय पर पहुंचने में कमेटी पर प्रभाव पड़ा था कि संघ के आरम्भ काल में किसी प्रकार रियासतों तथा प्रान्तों में जो भिन्न-भिन्न प्रकार की परिस्थितियां हैं, उन पर कुछ महत्व दिया जाये। अन्तिम आदर्श के रूप में इस विचार को दृष्टि में रखना वास्तव में ठीक है कि कालान्तर में रियासतें प्रान्तों के निकट आ जायेंगी और जो भी अन्तर इस समय हैं वे दोनों की सम्मति से अपने आप ही दूर हो जायेंगे। इस समय हमारा इस बात में हित है कि हम एक संगठित राजनैतिक ढांचा बनायें जिसका अस्तित्व हो चुका है और यदि सम्भव हो सके तो उस ढांचे को जितना हम बना सकते हैं, दृढ़ बनायें और ऐसा करने में भिन्न प्रकार की परिस्थिति वाले क्षेत्रों के पक्ष में, शायद कुछ के पक्ष में, हमें कुछ अन्तर रखना पड़ेगा जिसको मैं पक्षपात तक कहूंगा। श्रीमान् जी, हमें इस स्थिति को स्वीकार करना पड़ेगा और संघ-अधिकार-समिति की रिपोर्ट इस अन्तर की स्वीकृति पर निर्भर है।

दूसरा बड़ा प्रश्न जो कि वाद-विवाद के अंतर्गत उठाया गया है, मेरे ख्याल से वह पूर्णतया भ्रांति पर आश्रित है। प्रश्न यह है कि उपयोगिता संबंधी समझ की कमी के कारण अथवा विषय पर सावधानी से मनन न करने के कारण संघ-अधिकार-समिति ने केन्द्र को वे कर्तव्य तथा आर्थिक साधन सौंप दिये हैं जिनका प्रान्तों को सौंपा जाना अधिक उपयुक्त होता। इसको मैं भ्रांति कहता हूं। यह भ्रांति इस कारण उत्पन्न हो गई है कि जिन लोगों ने यह आपत्ति की है उन्होंने संघ-अधिकार-समिति की रिपोर्ट द्वारा बनाई गई केन्द्र तथा प्रान्तों की सूचियों का मुकाबला उन सूचियों से नहीं किया जो कि आपको उदाहरणार्थ भारत सरकार के 1935 ई॰ के एक्ट में मिलेंगी। मेरा यह तर्क उस बयान पर आश्रित है जिसे मेरे एक रियासत के मित्र ने यथेष्ट परिश्रम करके तैयार किया और मुझे दिखाया। मैं समझता हूं कि मेरा यह कहना ठीक है कि भारत सरकार के अंतर्गत वर्तमान प्रान्तीय सूची में ऐसा कोई भी मद नहीं है जिसको इस कमेटी ने, जिसकी इतनी आलोचना की गई है, इस संघ-अधिकार-समिति ने संघ-सूची में रखा हो।

[माननीय श्री एन. गोपालस्वामी आयंगर]

(वाह वाह) मैं इस बात का इसलिये जिक्र नहीं कर रहा हूं कि मैं भारत सरकार एक्ट की वर्तमान सूची को श्रेय दे रहा हूं। इन समालोचकों के लिये यह कहना सम्भव है कि भारत सरकार के एक्ट से संलग्न सूचियों में जो कुछ आपको मिलता है वह ठोस निर्णयात्मक विचारों पर आश्रित नहीं है, तथा यह भी कि संघ-अधिकार-समिति को आगे कदम बढ़ाना चाहिये था और यदि सम्भव था तो भारत सरकार के एक्ट की संघ-सूची के कुछ मदों को प्रान्तीय सूची में ले आना चाहिये था। मैं चाहता हूं कि इस समय केवल दैव ही इस बात को बताये कि यह समालोचना का, कि उन विषयों के अधिकारों को हमने केन्द्र को दे दिया है जो कि जहां तक हमने विचार किया है प्रान्तों के अंतर्गत रहने चाहियें, कोई सारपूर्ण आधार नहीं है।

एक बात और है जिसका मैं हवाला देना चाहता हूं और जिस पर मेरे एक मित्र ने बड़ी लम्बी व्याख्या की है; जिनके शासन-संबंधी अनुभव तथा वाक्पटुता का मैं बहुत सम्मान करता हूं। उन मित्र ने प्रान्तीय सूची में करों के मद से आरम्भ किया और आपको जो मद वहां दिखाई देते हैं उनको तुच्छ बताने तथा उनका मजाक उड़ाने का प्रयत्न किया। मेरे ख्याल से उन्होंने इस बात का प्रयत्न किया कि संघ-अधिकार-समिति की रिपोर्ट में केन्द्र और प्रान्तों में कर लगाये जाने वाले साधनों के बंटवारे में जानकर प्रान्तों के साधनों को कम करने तथा केन्द्र के साधनों को बढ़ाने का हिसाब लगाया गया है। श्रीमान् जी, यह विचार तथ्य की वास्तविक स्थिति से बहुत दूर है। सच तो यह है कि हमने प्रान्तीय सूची में कर-निर्धारण और मालगुजारी के उन सब साधनों को शामिल किया है जिनको आप भारत सरकार के एक्ट की प्रान्तीय सूची में पायेंगे। इस सिलसिले में मैं यह कहूंगा कि यह एक विचित्र-सी बात है कि जब मेरे माननीय मित्र ने इतना समय और वाक्चातुरी प्रान्तीय सूची के अन्तर्गत इन विभिन्न मदों को एक-एक करके तुच्छ बताने में व्यय की, उन्होंने उस समय तथा वाक्चातुरी का कुछ उपयुक्त भाग उन मदों में व्यय नहीं किया जिनको हमने संघ-सूची में शामिल किया है। वहां भी हमने जो कुछ भारत सरकार के एक्ट में दिया हुआ है उसको दुहराया है। ऐसा भी प्रतीत होता है कि उन्होंने उस विषय पर भी यथेष्ट महत्व नहीं दिया है जिस पर कमेटी ने रिपोर्ट के अंतिम पैरे में विशेष ध्यान आकर्षित किया है। कमेटी इस बात को स्वीकार करती है कि जो साधन केन्द्र के लाभ के लिये सूची में दिये गये हैं, उनसे इतनी आय हो सकती है जो कि आधुनिक मापदण्ड से केन्द्र की आवश्यकता के लिये पर्याप्त से अधिक होगी। किसी प्रकार कमेटी इस बात को मानती है कि यदि कमेटी कथित केन्द्रीय करों की सारी आय को

रखती है तो यह प्रान्तों की आर्थिक समता में गड़बड़ी कर सकता है। और इसीलिये उसने यह विशिष्ट सिफारिश की है कि इन साधनों (की आय को) में से कुछ साधनों (की आय को) केन्द्रों को पूर्णतया समर्पण करें अथवा किसी अधिकारी के विवेक पर आश्रित, जिसकी विधान बनाने के अरसे में हम इसी आशय से स्थापना कर सकते हैं, अन्य साधनों (की आय) को किसी नियत काल के पश्चात् केन्द्र तथा प्रदेशों में बांटें।

***श्री टी॰ प्रकाशम्** (मद्रास: जनरल): श्रीमान् जी, क्या मैं यह बताऊं कि भारत सरकार का एक्ट पार्लियामेंट में उस समय शीघ्रता के साथ लाया गया था जबकि देश में भीषण आंदोलन चल रहा था? (माइक, माइक की आवाज)।

***माननीय श्री एन॰ गोपालस्वामी आयंगर:** सभा के लाभ के लिये श्री प्रकाशम् ने जिस बात की ओर ध्यान आकर्षित किया है मैं उसे दुहरा दूं। उनका ऐसा तर्क है कि सन् 1935 ई॰ के एक्ट को शीघ्रता के साथ पार्लियामेंट में लाया गया था, इस देश को पार्लियामेंट में अपने पर्याप्त विचार रखने का अवसर नहीं मिला और इसलिये वह एक ऐसा एक्ट नहीं है जिसे कि हम अपने विधान के लिये अनुकरणीय मानें। इसके उत्तर में मैं जो कुछ कह सकता हूं वह यह है कि सन् 1935 ई॰ का एक्ट वह अन्तिम एक्ट है जो कि लगातार उन कार्रवाइयों में लिया गया जो कि मेरे ख्याल से आठ या दस वर्ष पूर्व आरम्भ हुईं और उसमें जो प्रस्ताव रखे गये हैं वे अनेकों कमीशनों तथा कमेटियों में होकर आये और अन्त में एक संयुक्त पार्लियामेंट की कमेटी द्वारा जिसमें इस देश के प्रतिनिधि भी थे, स्वीकृत हुये और इस सम्पूर्ण योजना का इतने परिश्रम तथा विचार करने के पश्चात् प्रादुर्भाव हुआ है कि जो साधारणतया इस प्रकार के कानून निर्माण करने के लिये हम इतना परिश्रम तथा विचार नहीं करते।

श्रीमान् जी, ऐसा हो सकता है कि उसके अंत में जो कुछ दिया हुआ था उस सबसे हम किसी विशेष रूप में संतुष्ट नहीं हुए। लेकिन हम वास्तव में यह शिकायत नहीं कर सकते कि यह कानून-निर्माण शीघ्रता के साथ किया गया या शीघ्रता के साथ पार्लियामेंट में लाया गया। उसमें जो कुछ दिया हुआ है उस सबको हम स्वीकार न करें।

वाद-विवाद के उत्तर में जिस बात को बताने की मेरी इच्छा है, वह यह है कि संघ-अधिकार-समिति की रिपोर्ट में हमने ऐसा कुछ भी नहीं दिया है जिसका आप तर्क के आधार पर विरोध कर सकते हैं। हमने प्रांतों के साधनों के निर्धन होने के बारे में तथा केन्द्र के साधनों के पूर्ण सम्पन्न होने के बारे में

[माननीय श्री एन. गोपालस्वामी आयंगर]

तथा ऐसी ही बातों के बारे में हमने बहुत-कुछ सुना है। लेकिन मुझे यह याद नहीं आता कि मैंने इस सभा में किसी वक्ता को यह कहते हुये सुना हो कि प्रांतीय सूची में हमें क्या बढ़ा देना चाहिये और संघ-सूची में क्या घटा देना चाहिये।

श्रीमान् जी, मैं मानता हूं कि रिपोर्ट इस रूप में हमारे नये विधान का पूरा मसविदा तैयार हो जाने के बाद हमारी अंतिम आर्थिक व्यवस्था क्या होगी, इसका पूरा चित्र सभा के सामने नहीं रखती है। मैंने सभा के समक्ष यह कई बार कहा है कि जो योजना विचाराधीन है, वह यह है कि आय के उन साधनों का समूचा प्रश्न जिनको देश में खोजकर प्रयोग किया जा सकता है, उन आय के साधनों को केन्द्र तथा प्रदेश में बांटना और वह प्रबन्ध जिसके द्वारा यह विभाजन सबका सब एक बार में या समय-समय पर अमल में लाया जा सकता है, जिसका सर्वप्रथम विशेषज्ञों की एक समिति द्वारा परीक्षण हो जाना चाहिये और शायद इसके बाद संघ-विधान-समिति द्वारा उस पर विचार हो जाना चाहिये और अंत में वह योजना समिति के सामने लायी जाये जिससे कि उस योजना के निर्माताओं को सभा के सदस्यों द्वारा क्रियात्मक सुझाव प्राप्त करने का लाभ हो सके। इसका जो वर्तमान रूप है, श्रीमान् जी, उसमें हमने केवल मदों को रखा है जिनको हम इन तीन विभिन्न सूचियों में लाना चाहते हैं। हमने आपसे यह भी कह दिया है कि यह मंशा नहीं है कि आय अथवा कर के इन साधनों को एकमात्र केन्द्र को दे दिया जाये। हमारा यह विचार है कि कुछ मद पूर्णतया प्रांतों को दे दिये जायें। हमारा यह विचार है कि अन्य मदों का प्रांतों तथा केंद्र में सुनीतियुक्त विभाजन कर दिया जाये। अतः श्रीमान् जी, इस समालोचना के लिये न्यायपूर्वक स्थान कहां है कि इस संबंध में संघ-अधिकार-समिति प्रांतों के साथ न्याय नहीं कर सकी? मैं स्वयं तो इस समालोचना के किसी आधार को नहीं पा सका। श्रीमान् जी, मैं सभा का अधिक समय नहीं लेना चाहता हूं और विधान के संबंध में इस प्रमुख वाद-हेतु पर हमारे सामने बड़ा रोचक वाद-विवाद हो चुका है और मैं आशा करता हूं कि माननीय सदस्य यह स्वीकार करेंगे कि गत कुछ महीनों में शीघ्रता के साथ जो परिवर्तनशील घटनायें हुई हैं उस काल में कमेटी ने जो कार्य किया है वह यदि प्रशंसा योग्य न समझा जाये तो कम से कम स्वीकार तो किया ही जायेगा।

***अध्यक्षः** श्री गोपालस्वामी आयंगर का यह प्रस्ताव है:

> ''निश्चय किया जाता है कि यह विधान-परिषद् अपने 25 जनवरी सन् 1947 ई० के प्रस्ताव द्वारा नियुक्त समिति की संघ-अधिकार संबंधी दूसरी रिपोर्ट पर विचार करे।''

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

***एक माननीय सदस्यः** मैं मत-विभाजन पर जोर देता हूं।

***माननीय श्री हुसैन इमामः** (बिहारः मुस्लिम): क्या मैं उस विधि को बता सकता हूं जिसका पहले समय में राज्य-परिषद् (Council of State) में कभी-कभी अनुसरण किया जाता था, अर्थात् अल्पमत वालों को अपना विरोध प्रदर्शन करने के लिये अपने-अपने स्थानों पर खड़े होने के लिये कहा जाता था? इससे आप एक नोट बना सकते हैं और समस्त सभा को मत गृह में जाने से बचा सकते हैं।

***मौलाना हसरत मोहानी** (संयुक्त प्रांतः जनरल): उन लोगों की क्या संख्या है जो तटस्थ हैं?

***अध्यक्षः** मेरे लिये यह पूर्ण स्पष्ट है कि प्रस्ताव के पक्ष में एक बड़ा बहुमत था। जो प्रस्ताव के विरोध में हैं वे अपने-अपने स्थानों पर खड़े हो जायें।

(6 माननीय सदस्य खड़े हुये।)

***अध्यक्षः** अतः मेरा अनुमान बिलकुल ठीक था। 6 सदस्य विरोध में हैं।

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

***मौलाना हसरत मोहानीः** मैं प्रस्ताव के पक्ष में हूं, लेकिन मैंने सुझाव रखा था कि सभा का एक बड़ा भाग, जिन्होंने मत नहीं दिया है, तटस्थ था।

***अध्यक्षः** मुझे पूर्ण संतोष है कि सभा इस प्रस्ताव को स्वीकार करने के पक्ष में है और इस विषय की समाप्ति हुई।

***श्री एम॰एस॰ अणे** (दक्षिणी रियासतें): अध्यक्ष महोदय, चूंकि आपने मतगणना स्वीकार कर ली है और जो विरोध में थे उनसे पूछ लिया है, इसलिये आपके लिये यह आवश्यक है कि जो लोग पक्ष में हैं उनसे भी आप पूछें।

***अध्यक्षः** मैं नहीं समझता हूं कि यह आवश्यक है। वह बिलकुल स्पष्ट है और मैं घोषणा भी कर चुका हूं। परन्तु यदि सभा का यही हठ है तो मैं उन सदस्यों से, जो कि प्रस्ताव के पक्ष में हैं, निवेदन करूंगा कि कृपया खड़े हो जायें।

(माननीय सदस्यों की एक बहुत बड़ी संख्या खड़ी हुई।)

***अध्यक्षः** अब तो यह बिलकुल स्पष्ट है।

***एक माननीय सदस्यः** और जो लोग तटस्थ हैं?

***अध्यक्षः** तटस्थों को जानने की आवश्यकता नहीं है। अब हम रिपोर्ट को लेंगे। हमें संशोधन को लेना है। पहला संशोधन श्री डी॰पी॰ खेतान द्वारा है।

***श्री देवी प्रसाद खेतानः** अध्यक्ष महोदय, मैंने इसलिये इस संशोधन की सूचना भेजी थी कि श्री गोपालस्वामी आयंगर के प्रस्ताव के शब्दों में केवल ''दूसरी रिपोर्ट'' का जिक्र आया है। उस हालत में कुछ थोड़ी-सी अस्पष्टता थी कि पहली रिपोर्ट पर विचार होगा या नहीं। लेकिन श्री गोपालस्वामी आयंगर ने अपना प्रस्ताव पेश करते हुए जो भाषण दिया उसमें यह स्पष्ट कर दिया कि केवल ''दूसरी रिपोर्ट'' इन शब्दों के होते हुए भी सभा को पहली रिपोर्ट पर विचार करने का अधिकार है। इन परिस्थितियों में श्रीमान् जी, जो संशोधन मेरे नाम से है उसे पेश करने की मैं कोई आवश्यकता नहीं समझता हूं।

***श्री नजीरुद्दीन अहमद** (पश्चिमी बंगालः मुस्लिम): अध्यक्ष महोदय, मैं एक वैधानिक आपत्ति उपस्थित करता हूं कि सभा ने प्रस्ताव को केवल उसी रूप में स्वीकार किया है जिस रूप में उसे पेश किया गया है। उसने प्रस्ताव के पक्ष में माननीय सदस्य के वक्तव्य को स्वीकार नहीं किया है। यह एक मान्य वैधानिक बात है कि जब प्रस्ताव पास हो जाता है तो कोई वक्तव्य जो उसके विरोध में है अथवा उसके अनुरूप नहीं है, आवश्यक रूप से स्वीकार नहीं किया जाता बल्कि अस्वीकार किया जाता है। प्रस्ताव में दिया हुआ है कि 'दूसरी रिपोर्ट' पर विचार किया जाये और भाषण में यह बताया गया था कि पहली रिपोर्ट के उस भाग पर जो कि इसके अनुरूप है, विचार किया जाये। पहली रिपोर्ट की जो भूमिका कही जाती है वह बहुत मर्यादापूर्ण है और उसका वह भाग ही ऐसा है जो कि इस रिपोर्ट के अनुरूप है और सदस्य के मतानुसार उस पर ही गौर करना है। मेरे मन में यह बात आती है कि पहली रिपोर्ट असामयिक है और रद्द कर दी गई है तथा उसका केवल वही भाग जो कि दूसरी रिपोर्ट के अनुरूप है, संयोगवश एक सम्बद्ध प्रमाणपत्र के रूप में विचारार्थ ले लिया जाये।

एक बात और है जो संशोधन आ गया था, वह प्रस्ताव पर मत लेने के पूर्व पेश किया जाना चाहिये।

***अध्यक्षः** उसे पेश नहीं किया गया।

***श्री नजीरुद्दीन अहमदः** जी हां, चूंकि संशोधन पेश नहीं किया गया इसलिये उस पर प्रश्न ही नहीं उठता। यदि वह माननीय सदस्य जिसने कि संशोधन रखा था इस बात से खुश हैं कि पहली रिपोर्ट अभी विचाराधीन है तो उन्हें खुश होने दीजिये। परन्तु वैधानिक स्थिति यह है कि पहली रिपोर्ट रस्मी ढंग से सभा के समक्ष नहीं है।

इस निवेदन को करने के लिये मेरे पास एक और कारण भी है। उन सदस्यों को जो कि दुर्भाग्यवश आरम्भकाल से सभा में नहीं हैं अर्थात् वे सदस्य जो 3 जून की घोषणा के फलस्वरूप यहां आये हैं, उनको अभी तक पहली रिपोर्ट की प्रति नहीं मिली है। इसका भी यही मतलब है कि सभा के सामने जिस रूप में वह आज निर्मित है, पहली रिपोर्ट नहीं है।

इन परिस्थितियों में मैं इस बात के लिये आपका निर्देश चाहता हूं कि पहली रिपोर्ट केवल इस बात के कारण कि माननीय सदस्य ने सुन्दर ढंग से कहा कि इस पर भी विचार किया जाये, सभा के समक्ष है। मैं निवेदन करता हूं कि संयोगवशात् तर्क के रूप में उस पर विचार किया जा सकता है न कि सभा के समक्ष उचित रूप से मत लेने के लिये एक मौलिक रिपोर्ट के रूप में।

***अध्यक्षः** क्या माननीय सदस्य को नीली किताब की प्रति मिल गई है? उसमें पहली रिपोर्ट भी है।

***श्री नजीरुद्दीन अहमदः** दुर्भाग्य से वह पैकेट कान्स्टीट्यूशन हाउस के मेरे उस पते से भेजा गया था, जहां मैं पिछले अधिवेशन में रहा था। अब मैं वैस्टर्न कोर्ट में रहता हूं। कान्स्टीट्यूशन हाउस को अनेकों बार पत्र तथा नौकर भेजने पर भी मुझे पैकेट नहीं मिला।

***अध्यक्षः** यह दुर्भाग्य की बात है कि वह आपके पास नहीं पहुंची। आपको दूसरी प्रति दी जायेगी।

अब हमें रिपोर्ट पर विचार करना है। रिपोर्ट में कुछ पैरे हैं और दो परिशिष्ट भी हैं जिनमें सूचियां हैं। मेरे पास कुछ संशोधनों की सूचना है जिसमें यह सुझाव रखा है कि कुछ पैरों के स्थान में अन्य पैरे रख दिये जायें, कुछ पैरों में कुछ जोड़ दिया जाये तथा कुछ नये पैरे बढ़ा दिये जायें। मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि

[अध्यक्ष]

पूरी रिपोर्ट अब सभा के सामने है और ये रिपोर्ट कमेटी की रिपोर्ट है। मुझे नहीं मालूम है कि रिपोर्ट के एक पैरे के स्थान में अन्य किसी पैरे को रखने का सभा को अधिकार है या नहीं। शायद सभा यह कह सकती है कि किसी विशेष पैरे में निहित सिद्धान्त के स्थान में अन्य कोई सिद्धान्त होने चाहिये या रिपोर्ट के सारांश को एक विशेष रूप में परिवर्तित कर देना चाहिये। मैं नहीं जानता हूं कि यह कहना ठीक है या नहीं कि रिपोर्ट के एक पैरे के स्थान में दूसरा पैरा रख देना चाहिये।

खैर, यह एक पारिभाषिक विषय है। अब हमें रिपोर्ट के औचित्य पर विचार करना है। हमें एक-एक पैरा करके रिपोर्ट को लेना है और यदि सदस्यों द्वारा कोई संशोधन होगा तो मैं उनको अपने उन सुझावों को रखने के लिये बुलाऊंगा, जिनकी उन्होंने संशोधन के रूप में सूचना दे दी है। हम रिपोर्ट को एक-एक पैरा करके लेंगे। श्री गोपालस्वामी आयंगर, क्या आप एक एक पैरा करके रिपोर्ट को लेंगे?

***माननीय श्री एन० गोपालस्वामी आयंगर:** श्रीमान् जी, मैं आपके उस सुझाव को नहीं समझ सका जिसको आपने कृपा करके बताया था। क्या आपका ऐसा विचार है कि मैं उसे एक-एक पैरा करके पढ़ूं?

अध्यक्ष: नहीं, मेरे ख्याल से पैरों का पढ़ा जाना आवश्यक नहीं है।

***माननीय श्री एन० गोपालस्वामी आयंगर:** क्या मैं एक दूसरा सुझाव रख सकता हूं जो कि शायद अधिक सरल होगा और यह उस विधि के आधार पर होगा, जिसका प्रस्तावित कानून के संबंध में हम व्यवस्थापिका में अनुसरण करते हैं। किसी निर्वाचित समिति की रिपोर्ट पर विचार करने का प्रस्ताव स्वीकृत हो जाने के बाद विधि यह है कि अध्यक्ष कहते हैं कि प्रश्न यह है कि वाक्यखण्ड (1) प्रस्तावित कानून का भाग है और फिर संशोधन पेश किये जाते हैं। श्रीमान् जी, यदि मैं विधि पेश करूं तो वह यह है कि आप इस रिपोर्ट में दिये गये पैरों की संख्या को ले सकते हैं कि यह पैरा रिपोर्ट का भाग है और फिर यह कहें कि यदि कोई संशोधन है तो उस पर विचार किया जाये और पैरे पर मत लिये जायें।

***अध्यक्ष:** मैं इसी पद्धति का अनुसरण करूंगा। हम एक-एक पैरा करके लेंगे। मुझे पैरा 1 पर किसी संशोधन की सूचना नहीं मिली है।

***श्री के॰ सन्तानम्:** श्रीमान् जी, मुझे एक सुझाव रखना है। मेरे विचार से हमें मदों को पहले ले लेना चाहिये और रिपोर्ट के शेष विषय को अंत में, क्योंकि वह केवल मदों का संक्षिप्त रूप है। मदों को समाप्त करने के पश्चात् हम भिन्न-भिन्न पैरों पर वाद-विवाद कर सकते हैं। यदि हम मदों को पहले ले लें तो बहुत समय बच जायेगा। यदि हम पैरों को पहले लेते हैं तो जो कुछ इन दो दिनों में कहा जा चुका है, उसका ही दुहराना होगा।

***श्री एम॰एस॰ अणे:** अध्यक्ष महोदय, रिपोर्ट दो भागों में है। पहले भाग में वे सिद्धान्त दिये हुये हैं जिनके आधार पर दूसरे भाग में तीन सूचियां बनाई गई हैं। अब यदि हम उस बात को लें जिसका मेरे एक मित्र ने उल्लेख किया है कि प्रस्तावित कानून के समान, जब वह सभा में पेश किया जाता है इस पर विचार किया जाये तो इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि साधारणतया प्रस्तावित कानून का एक वह भाग होता है, जिसे प्रस्तावित कानून के उद्देश्य और लक्ष्य तथा कारण कहते हैं। इसके पश्चात् प्रस्तावित कानून होता है। प्रस्तावित कानून को पहले स्वीकार किया जाता है। अन्त में प्रस्तावित कानून के स्वीकृत हो जाने के पश्चात् हम उन उद्देश्यों तथा कारणों को स्वीकार करते हैं जो हमें केवल प्रस्तावित कानून को समझने संबंधी आधार प्रदान करता है, इससे अधिक और कुछ नहीं। हमें इस रिपोर्ट पर एक-एक वाक्यखंड लेकर विचार नहीं करना है। इसमें वे सामान्य सिद्धान्त दिये गये हैं जिनके आधार पर तीन सूचियां बनाई गई हैं। हमें इन दिये गये सिद्धान्तों के आधार पर इन सूचियों की परीक्षा करनी है। अत: उचित पद्धति यह होगी कि इन मदों पर पहले विचार किया जाये और उसके अंत में यदि हम मूल विषय पर विचार करते समय यह अनुभव करते हैं कि पैरों के सिद्धान्तों में कुछ परिवर्तन हो गया है तो रिपोर्ट के दूसरे भाग में हम वे परिवर्तन कर सकते हैं।

***माननीय श्री एन॰ गोपालस्वामी आयंगर:** श्रीमान् जी, मैं श्री अणे से पूर्णतया सहमत हूं कि यदि हम दृढ़ता से अनुसरण करें.....

***श्री बी॰ पोकर साहब बहादुर:** श्रीमान् जी, एक वैधानिक आपत्ति है। मैं यह जानना चाहूंगा कि केवल दूसरी रिपोर्ट अकेली या दूसरी रिपोर्ट पहली रिपोर्ट के साथ-साथ सभा के सामने विचारार्थ है।

***अध्यक्ष:** दूसरी रिपोर्ट विचारान्तर्गत है। पहली रिपोर्ट का बहुत-कुछ अंश इसमें शामिल है। यदि कोई अंतर है तो केवल यही कि यह दूसरी है जिस पर अब विचार करना है।

***माननीय श्री एन० गोपालस्वामी आयंगर:** यदि हम प्रस्तावित कानून की पद्धति का दृढ़ता से अनुसरण करें तो मैं श्री अणे से पूर्णतया सहमत हूं कि जो कुछ उन्होंने बताया है वही उचित मार्ग होगा। विशेष बात जो मैंने रखी वह इस कारण थी कि आपने अभी यह निर्देश किया था कि हमें रिपोर्ट पर भी एक-एक पैरा लेकर विचार करना है। हमने यह प्रस्ताव स्वीकार कर लिया है कि रिपोर्ट पर विचार किया जाये और इस स्वीकृति से ही सभा की रिपोर्ट को विचार के अंतर्गत लेने की यथेष्ट स्वीकृति समझी जाती है और हमें केवल सूची के मदों पर विचार करना है। आप संभवतया अन्त में व्यापक रूप से वाद-विवाद कर सकते हैं और जैसे आप चाहें वैसे निश्चय कर सकते हैं। अत: यदि आप यह आदेश देते हैं कि हम रिपोर्ट पर एक-एक पैरा लेकर विचार करें तब तो मैंने जिस पद्धति को सुझाया है उसे ग्रहण किया जा सकता है। और यदि आप यह समझें कि रिपोर्ट पर विचार हो चुका है तो उस रिपोर्ट के विवरणपूर्ण पैरों के लेने की कोई आवश्यकता नहीं है; हम केवल मदों को ले सकते हैं और उन पर विचार समाप्त कर सकते हैं।

***अध्यक्ष:** मेरे विचार से यह अच्छा होगा कि हम मदों को पहले ले लें। हम सूचियों के मदों को एक-एक करके लेंगे और जब वे समाप्त हो जायेंगे, यदि आवश्यकता होगी तो हम पैरों को ले लेंगे। सम्भव है इसकी आवश्यकता ही नहीं पड़े। हम इसे कल लेंगे। सभा अब स्थगित होती है।

तत्पश्चात् शुक्रवार ता० 22 अगस्त सन् 1947 ई० के प्रात: दस बजे तक परिषद् स्थगित हुई।